इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ४ अंक २ आषाढ़ मास कलियुगाब्द ५११३ जुलाई २०११

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादक मण्डल :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ०ओम प्रकाश शर्मा
प्रो० सतीश चन्द्र

टंकण एवं सज्जा :
अश्वनी कालिया

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव—नेरी, डाकघर—खगल
जिला—हमीरपुर—१७७००१ (हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२—२०३०४४

मूल्यः
प्रति अंक —१५.०० रुपये
वार्षिक — ६०.०० रुपये

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय		
संवीक्षण		
हिमालय क्षेत्र— आन्तरिक एकता के सूत्र	ठाकुर राम सिंह	३
संविधान की मूल भावना है अखण्ड भारत	कृष्णानन्द सागर	१६
राष्ट्र विभूति		
महामना मदनमोहन मालवीय	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	२२
आचार्य दर्शन		
मालवीय जी का निर्णय	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य	२७
लोक परम्परा		
महासुवी और सिरमौरी लोक गाथाओं में सृष्टि रचना विचार	डॉ. ओम प्रकाश शर्मा	२९
हिन्दी दिवस विशेष		
हिन्दी क्यों नहीं बनी राष्ट्रभाषा	श्री प्रकाश	४३
ताजा—ताजा अंग्रेज़ी	नरेन्द्र कोहली	४६

सम्पादकीय

संस्कृत दिवस और हिन्दी दिवस

भारतवर्ष में प्रतिवर्ष श्रावणी पूणिमा रक्षा बन्धन के दिन संस्कृत दिवस का आयोजन होता है। यह आयोजन राष्ट्रमानस को राष्ट्र की निरन्तर प्रवाहमान संस्कृत भाषा की गौरवशाली परम्परा का स्मरण करवाता है। भारतवर्ष के भूतपूर्व महामहिम राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जब ग्रीस की यात्रा पर गए थे तो वहां एथेंस के राष्ट्रपति भवन में आयोजित स्वागत समारोह में ग्रीस के महामहिम राष्ट्रपति कारलोस पापोलियस ने उनके स्वागत का समारम्भ संस्कृत भाषा में यह कहकर किया – **राष्ट्रपतिः महाभागाः स्वागतम् यवनदेशे।** संस्कृत भाषा में अभिव्यक्त यह स्वागत वाक्य इस सत्य का प्रमाण है कि संस्कृत भाषा भारत की पहचान है। इसमें सृष्टि का कल्पादि से 197 करोड़ वर्षों से भी अधिक कालावधि का इतिहास समाहित है। इसमें अध्यात्म, दर्शन, लोक जीवन तथा समस्त ज्ञान-विज्ञान का अक्षय भण्डार संग्रहित है जिससे सम्पूर्ण विश्व के कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है। इसी से भारतवर्ष विश्वगुरु के पद पर प्रतिष्ठित् रहा है। इस भाषा के प्रति भारत के मन की गूढ़ आस्था जुड़ी है। संस्कृत भाषा की सार्वकालिक गुणशीलता के प्रबोध से उत्तराखण्ड प्रान्त की सरकार ने मुख्यमन्त्री डॉ.रमेश पोखरियाल 'निशंक' के विवेकशील राष्ट्रवादी नेतृत्त्व में त्रिभाषा सिद्धान्त के अन्तर्गत विद्यालयों में संस्कृत भाषा का अध्ययन द्वितीय भाषा के रूप में अनिवार्य करवा कर अनुकरणीय मार्ग प्रशस्त किया है।

14 सितम्बर का दिन भारतवर्ष में प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दिवस का आयोजन रस्म-अदायगी मात्र होता जा रहा है। शासन राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति संवेदनशील नहीं है। अंग्रेजी भाषा का ज्ञान अर्जित करना अनुचित नहीं है, परन्तु राष्ट्र भाषा हिन्दी पर अंग्रेजी का वर्चस्व स्थापित करना, अत्यन्त अशोभनीय है। यहां तक कि हिन्दी भाषी प्रान्तों में भी अंग्रेजी भाषा के सामने हिन्दी भाषा बौनी बनी हुई है। प्रथमतः हिन्दी भाषी प्रान्तों की सरकारों को राष्ट्र धर्म का निर्वाह करते हुए शासकीय कार्यों में हिन्दी का प्रयोग प्रतिबद्ध भाव से सुनिश्चित करवाना चाहिए, तभी इसके लिए राष्ट्रव्यापी अनुकूल वातावरण सृजित हो सकेगा। यहां यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि व्यवहार में सरल हिन्दी का प्रयोग होना उचित है, लेकिन सरलता के नाम पर भाषा का विकृतिकरण उचित नहीं है। हिन्दी में संस्कृत भाषा की स्वाभाविक शब्द सम्पदा संरक्षित रहने से ही हिन्दी भाषा की राष्ट्रव्यापी स्वीकार्यता सम्भव है। प्रो. रज्जु भैया के चेन्नै विश्वविद्यालय में दिए गए हिन्दी भाषा के भाषण का इस अंक के **'हिन्दी क्यों नहीं बनी राष्ट्र भाषा'** लेख में उल्लिखित वृत्तान्त इसी वास्तविकता का बोध करवाता है।

पौष कृष्ण अष्टमी, कलियुगाब्द 4963, विक्रमी संवत् 1918 तदनुसार ईस्वी सन् 25 दिसम्बर, 1861 को जन्म प्राप्त भारत राष्ट्र की महान् राष्ट्रभक्त विभूति महामना मदनमोहन मालवीय जी का वर्तमान प्रचलित वर्ष 150 वां जन्म जयन्ती वर्ष है। इसी के दृष्टिगत महामना मालवीय जी से सम्बन्धित लेख भी इस अंक में सम्मिलित हैं।

विनीत :

विद्या चन्द ठाकुर

संवीक्षण

हिमालय क्षेत्र-आंतरिक एकता के सूत्र

ठाकुर राम सिंह

हिमालय विश्व में अपने सर्वाधिक विशाल और उच्चतम शिखरों की भव्यता, दिव्यता और सुन्दरता से युक्त अपने सजीव और वर्धमान अस्तित्व के साथ गौरव से जम्बूद्वीप के मध्य विराजमान है। यह भारतीय जीवन की संरचना में अपृथक्-करणीय भाव से जुड़ा है। यह आज भी हमारे देश भारत के कवियों, लेखकों, गायको, नर्तकों, शिल्पियों और रंगचित्रकों को उत्साहित और प्रेरित करता है। महाकवि कालीदास ने इसे नागाधिराज अर्थात् पर्वतों का राजा कहा है। इसके अतिरिक्त इसे प्रकृति का मंदिर, देवताओं का सिंहासन, सत्य के अन्वेषकों का आश्रयस्थल आदि विशेषणों से संबोधित किया जाता है।

हिमालय का उल्लेख विश्व के प्रथम ग्रंथ ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ सूक्त में आता है। इसमें कहा गया है — ज्योतिर्मय अंड से जिस सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी का उदय हुआ वही हिमवंत पर्वत का भी स्वामी है। अथर्ववेद के पृथ्वीसूक्त में भी हिमालय की प्रशंसा की गयी है।

आधुनिक पाश्चात्य भूगर्भ शास्त्र के अनुसार हिमालय का जन्म 'तेथाइस' सागर के तल से आज से पाँच करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। भू-गर्भ शास्त्रियों का यह भी कहना है कि हिमालय आयु में विश्व के पर्वतों में छोटा, परन्तु सर्वाधिक उच्चतम, सजीव और सतत् वर्धमान है। वायु पुराण के अनुसार हिमालय का जन्म आज से १३ करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। भारतीय वैज्ञानिक कालगणना के अनुसार यह घटना चाक्षुष मन्वन्तर से २९,८९,८१,३०१ वें वर्ष में हुई थी अर्थात् चाक्षुष मन्वन्तर के ७७,३८,६९९ वर्ष शेष रहने पर।

गत हजार बारह सौ वर्षों की राजनीतिक उथल-पुथल के कारण हिमालय के क्षेत्र के बारे में भ्रामक धारणायें उत्पन्न हो गयी हैं, भूगोल के कुछ आधुनिक विद्वान इसका क्षेत्र असम से कश्मीर तक मानते हैं। यह वर्तमान हिन्दुस्थान की पूर्व से उत्तर-पश्चिम की राजनीतिक सीमा है। कुछ भूगर्भशास्त्री इसे पूर्व में ब्रह्मदेश से पश्चिम में अफगानिस्तान तक स्वीकार करते हैं। इसकी लम्बाई २५०० किलोमीटर है और यह हिन्दुस्थान की पूर्व से पश्चिम तक की गत बारह सौ वर्षों की राजनीतिक सीमा के अन्तर्गत है।

उपरोक्त सीमाएँ राजनीतिक परिवर्तनों के अनुसार मानी गयी है। इनके अनुसार हिमालय की उत्पत्ति, और विस्तार नहीं हुआ है। अत: हमें वास्तविकता को जानने के लिये भारत के प्राचीन भूगोल, पुराणों एवं संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों का अध्ययन करना

आवश्यक है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हिमालय प्राचीन भारत के मध्य में स्थित है। इसका पूर्वी छोर सिंगापुर है। यह वहां से शुरू हो कर धनुष के आकर में भारत के मध्य से होता हुआ ईरान में पहुँचकर अपना पश्चिमी छोर बनाता है। Collins Atlas of the World के अनुसार यह सिंगापुर से ईरान तक अर्थात् पूर्वी छोर से लेकर पश्चिमी छोर तक ६००० किलोमीटर के लगभग लम्बा है। इसकी शाखायें और प्रशाखायें विभिन्न नामों से प्राय: सारे एशिया को व्याप्त करती हैं।

इतने विशाल हिमालयी क्षेत्र के जनजीवन के आंतरिक सूत्रों को जानने के लिये इस विस्तृत भूखण्ड के देशों के प्राचीन इतिहास और वर्तमान स्थिति का सिंहावलोकन करना आवश्यक है। इस दृष्टि से हम सर्वप्रथम हिमालय के पूर्वी क्षेत्र के अन्तर्गत देशों के इतिहास का विचार कर एकता के सूत्रों की खोज करेंगे।

जापान, फिलिपाइन और आस्ट्रेलिया को छोड़कर हिमालय दक्षिण-पूर्व एशिया के प्राय: सभी देशों में अपनी विभिन्न पर्वत शृँखलाओं के रूप में फैला हुआ है। इसमें वर्तमान इण्डोनेशिया (हिन्दू एशिया), मलाया, वर्मा, थाईलैण्ड, कम्बोडिया, लाओस, अन्नाम, चम्पा (वियतनाम), टोकिन, कोचीन आदि सभी देश पूर्व में भारत के अंग रहे हैं। इन सब देशों की सभ्यता और संस्कृति का मूल स्रोत भारत ही है। इसाई कालगणना की प्रारंभिक शताब्दियों में यह देश दो समूहों में बंटे थे — यथा सुवर्ण भूमि एवं स्वर्ण द्वीप। सुवर्ण भूमि में ९ देश थे — अराकान, वर्मा, स्याम (थाईलैण्ड), लाओस, कम्बोडिया, अन्नाम, चम्पा, टोकिन, चीनी कोचीन तथा स्वर्ण द्वीप में — मलाया, जावा, सुमात्रा, वोरन्यो, बाली, और कुछ अन्य द्वीप थे। — इन सब देशों के राजा हिन्दू थे और इन सभी क्षेत्रों में हिन्दू संस्कृति ही एकता की द्योतक थी।

प्राचीनकाल से इन देशों में हमारे ऋषि अगस्त्य का पूजन होता है। इनकी वर्तमान भाषाओं में संस्कृत के शब्दों का आधिक्य है। अधिकांश मुसलमान हो जाने के बाद भी नामकरण की हिन्दू पद्धति अभी भी चल रही है। उदाहरण के लिये इण्डोनेशिया के पहले राष्ट्रपति का नाम सुकर्णो था और उनकी पत्नी का नाम रत्नावती था।

इण्डोनेशिया के स्वतन्त्र होने पर पंडित जवाहरलाल नेहरू जी ने राष्ट्रपति सुकर्णो (इण्डोनेशिया) को भारत और इण्डोनेशिया में मैत्री सम्बन्धों के लिये पत्र लिखा। सुकर्णो ने उत्तर दिया : ''भारत को हम अपनी मातृभूमि मानते हैं, इस भाव से आप को हमारे परस्पर संबंधों का पता लग जायेगा।"

इन सब देशों में बड़े-बड़े हिन्दू मंदिर हैं, जिनमें हिन्दू देवी-देवताओं की ७०-७० व ८०-८० फुट ऊँची प्रतिमायें हैं। यहाँ संस्कृत भाषा का सम्मान है। थाईलैण्ड का नाम श्रीकृष्ण के नाम पर श्यामदेश है। वहाँ के राजा की उपाधि राम है। उनके यहाँ के लोगों के नाम हमारे नामों जैसे ही है।

कम्बोडिया में अंगकोरवाट नामक सूर्य का मंदिर विश्व में उपलब्ध सब सूर्य

मन्दिरों से बड़ा है। जिसकी मुरम्मत कर पुनर्जीवन प्रदान करने का कार्य भारतीय पुरातत्त्ववेताओं ने अभी कुछ वर्ष पूर्व ही सम्पन्न किया है।

नदियों के नाम गंगा और यमुना है और नगरों के अयोध्या। इन सब देशों को रामायण देश कहा जाता है, क्योंकि रामायण और महाभारत इनके राष्ट्रीय ग्रंथ हैं।

इन देशों में गंगा जल को पूज्य मानकर उनकी पूजा अभी भी प्रचलित है। द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व इण्डोनेशिया और मलाया पर हालैण्ड और डेनमार्क का विदेशी राज्य था। द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारम्भ में जापान ने उनको पराजित कर वहां अपना राज्य स्थापित कर लिया। बाद में जापान हार गया और इण्डोनेशिया मित्र राष्ट्रों के अधिकार में आ गया। उन्होंने इसे स्वतंत्र कर दिया और सुकर्णो इण्डोनेशिया का राष्ट्रपति बना, परन्तु अमेरिका ने न्यू गिनी द्वीप को अपने अधिकार में कर लिया। सुकर्णो ने कहा कि न्यू गिनी इण्डोनेशिया का हिस्सा है। अमेरिका ने कहा नहीं यह हालैण्ड और डेनमार्क का है, परन्तु सुकर्णो नहीं माने। अमेरिका ने कहा कि आप इसके लिये विश्व न्यायालय जिनेवा जायें। अत: इण्डोनेशिया की सरकार ने विश्व न्यायालय में दावा कर दिया। दूसरा पक्ष हालैण्ड, डेनमार्क का था। चार-पांच वर्ष बीत गये, परन्तु कोई निर्णय नहीं हुआ। अत: इण्डोनेशिया की सरकार ने विश्व न्यायालय के न्यायाधीश को लिखकर निवेदन भेजा कि इस मुकद्मे का निर्णय जल्दी करें। न्यायाधीश ने दोनों पक्षों को ऐतिहासिक साक्ष्य पेश करने के लिए कहा। अगली पेशी आई तो इण्डोनेशिया के प्रतिनिधि रामायण को साक्ष्य के रूप में पेश करने के लिये ले गये और न्यायधीश के सम्मुख रख दिया और कहा कि यह हमारा साक्ष्य है। न्यायाधीश ने कहा कि रामायण तो हिन्दुओं का है। उन्होंने कहा कि हम हिन्दू इत्यादि कुछ नहीं जानते, यह हमारा राष्ट्रीय ग्रन्थ है। जज ने कहा साक्ष्य बताओ। उन्होंने रामायण का वह अध्याय निकाला जहां राम सीता को खोजने के लिये हनुमान और सुग्रीव को निर्देश दे रहे हैं — जावा जाना, मलाया जाना, सुमात्रा जाना और उस क्षेत्र में भी जाना जहाँ हिमपात होता है। शायद रावण ने सीता को वहां रखा हो। जज ने कहा यह क्या साक्ष्य है? उन्होंने कहा — हमारे इण्डोनेशिया में बर्फ केवल ***'न्यू गिनी'*** में पड़ती है। अगली पेशी पर इण्डोनेशिया ने मुकदमा जीत लिया। जहां इण्डोनेशिया की सरकार ने अपनी राजधानी जकार्त्ता में इस विजय के उपलक्ष्य में अंतर्राष्ट्रीय रामायण महोत्सव मनाया और भारत सरकार को भी निमंत्रित किया।

भारत का इतिहास बताता है और चीन स्वीकार करता है कि उनका प्रथम राजवंश भारत के चन्द्रवंशी राजा आयु की संतान में से था। एक अन्य उदाहरण से भी यह स्पष्ट हो सकता है, कि चीन की विचारधारा और सभ्यता-संस्कृति का स्रोत भारत ही है। उदाहरण यह है कि कुछ वर्ष पहले अमेरिका स्थित चीन के राजदूत की सेवा अवधि समाप्त होने पर वह अपने देश वापस जाने के लिये तैयार हो रहा था, परन्तु जाने से पहले उसने एक पत्रकार परिषद् अपने चीनी दूतावास में बुलाई । एक पत्रकार ने चीन और

भारत के परस्पर के संबन्धों के बारे में प्रश्न किया। चीनी राजदूत ने बताया – ***''भारत ने हमारे देश चीन पर २००० वर्ष तक वैचारिक साम्राज्य (शासन) किया है, परन्तु एक भी सैनिक न भेजते हुए।''***

द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान ने बम वर्षा करके चीन की अजेय दीवार को तोड़ दिया। चीनी सेना दीवार की मुरम्मत करने गयी तो उनको भग्नावशेषों में एक बड़ा डिब्बा (लोहे का) मिला। कौतुहल से उन्होंने जब उसे खोला तो उसमें मनुस्मृति की प्रति मिली जो उस दीवार के निर्माण के श्रीगणेश के शिलान्यास के समय डिब्बे में बंद कर भित्ति में दबाई थी।

अपने भारत की पुण्य नगरी कांचीपुरम् के राजा धर्मपाल अपने राज्य से सन्यास लेकर चीनियों की सेवा करने का निश्चय कर अपने साथ कुछ अपने सहयोगियों को लेकर चीन पहुँच गया और चीनियों को मानव बनाने के लिए आश्रम की स्थापना कर कार्य शुरु किया। कुछ समय कार्य करने के बाद उनको लगा कि कार्य बहुत बड़ा है और जीवन छोटा है। अत: उसने प्रतिज्ञा की कि मैं नौ वर्ष तक सोऊँगा नहीं और दिन-रात कार्य करूँगा। मानव का ध्वंस करना आसान है परन्तु मानव बनाना कठिन है और विशेषत: चीनियों को, जो चार चीजों को छोड़कर सब कुछ खा जाते हैं जो कि खाट, टेबल, हवाई जहाज़ और ऐसी ही कोई चौथी वस्तु है।

वह महापुरुष चार वर्ष तक सतत् रूप से दिन और रात कार्य करता रहा। फिर आयी नींद। यह जब आती है तो बिस्तरा लेकर नहीं आती है। नींद की खुमारी से धर्मपाल ग्रस्त हो गया। उसने भगवान से प्रार्थना की कि मैं तो आपके कार्य के ही लिये आया हूँ। मेरा तो राज्य था, सेना थी, धन-धान्य से सम्पन्न जीवन था। अत: मेरी प्रतिज्ञा मत तोड़िये। भगवान की कोई कृपा नहीं हुई। आयुर्वेद के ग्रंथ देखे ताकि नींद को कम करने की औषध मिल सके, परन्तु इसमें भी सफलता नहीं मिली। स्थानीय लोगों से उपचार का पता किया, परन्तु वे भी कुछ बता नहीं सके। ऐसी अवस्था में जब भगवान की भी कृपा नहीं हो रही है और अन्य सब उपाय विफल हो जायें तो हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा है हिम्मत मत हारो। कुछ न कुछ करते रहो। रास्ता मिल जायेगा। उस महापुरुष ने ऐसा ही किया। वह बैठा नहीं। आश्रम के चारों ओर घूमता रहा। एक दिन एक झाड़ी के पत्ते मुँह में डाले तो उसे लगा कि नींद कुछ कम हुई है। अत: वह उस झाड़ी के पत्ते को पानी में उबालकर पीता रहा और उसने अपनी प्रतिज्ञा के नौ वर्ष पूर्ण कर दिये। इसको योग में निर्विकल्प समाधि कहते हैं। आज वह योगी धर्मपाल नहीं है। अपने लिये नहीं, परिवार के लिये नहीं, अपने देश के लिये भी नहीं, अपितु एक-दूसरे देश के लिये नौ वर्ष तक दिन और रात कार्य किया। आंतरिक एकता का यह सेवा का कार्य ही एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है। हमारे विद्यार्थी उनको पढ़ाने वाले अध्यापक, प्राध्यापक धर्मपाल का नाम भी नहीं जानते हैं, परन्तु कुछ वर्ष पूर्व जापान में धर्मपाल के नाम पर एक अभियान चला कि उस

महापुरुष ने जिस मानवीय विचारधारा का श्रीगणेश किया उसके प्रचार-प्रसार के लिये जापान के एक विश्वविद्यालय की स्थापना करेंगे।

विश्व व्यापी हिन्दू संस्कृति से कोरिया भी अछूता नहीं रहा सका। कुछ वर्ष पूर्व भारत सरकार ने अपने देश के पत्रकारों का एक शिष्टमण्डल दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के अध्ययन के लिये भेजा। वह अपने प्रवास के कार्यक्रमानुसार कोरिया पहुँचा। वहां उनका कोरिया की सरकार के द्वारा स्वागत किया गया। चाय-पान और भोजन करने के लिये कोरिया के संयोजकों के मुखिया ने उन पत्रकारों से निवेदन किया कि आप भोजन पश्चिम पद्धति से करेंगे या कोरियाई पद्धति से। जब वे पत्रकारगण भोजन करने के लिये भोजन कक्ष में पहुंचे तो उनको आश्चर्य हुआ कि वहां न तो कुर्सियां हैं और न ही मेज। कक्ष के फर्श पर दो पंक्तियों में काठ के पीढ़े लगे हैं, बैठने के लिये और भोजन करने के लिये। पत्रकारों ने कहा कि भोजन करने की यह पद्धति तो हिन्दू है। उत्तर मिला हम यह जानते हैं कि यह हमारी पद्धति है।

२००० वर्ष पूर्व कोरिया में हिन्दू राज्य था। उस समय की वहां की राजमाता अयोध्या की राजकुमारी थी। उसके वंश की खोज में वह शिष्टमण्डल २ वर्ष पूर्व अयोध्या पहुँचा। अपने देश के प्रमुख समाचार-पत्रों में यह समाचार छपा। राजकुमारी का वंश मिल गया। शिष्टमण्डल वापस कोरिया चला गया। परन्तु जाने के पूर्व शिष्टमण्डल के मुखिया ने प्रसन्न मुद्रा में घोषणा की कि अयोध्या के विकास के लिये जितना धन लगेगा वह कोरिया की सरकार देगी। वंश के खोजे जाने के उपलक्ष्य में कोरिया में एक बहुत बड़ा आनन्दोत्सव मनाया गया।

पौराणिक भूगोल के विषय में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त करने वाले सागर विश्वविद्यालय (म.प्र.) के प्रो. डॉ. अली ने अपने शोध प्रबन्ध में लिखा है कि युधिष्ठिर सारे एशिया का चक्रवर्ती सम्राट था। चक्रवर्ती सम्राट अर्थात् सारे विश्व का सम्राट। जब उसका राज्याभिषेक होता था तो वह शपथ लेता था सप्तद्वीपेश्वर के नाते अर्थात् सप्त महाद्वीपों के सम्राट रूप में। भारत में ऐसे ४० चक्रवर्ती सम्राट हुये हैं और युधिष्ठिर उनमें आखिरी चक्रवर्ती सम्राट थे। उस समय न तो ईसाईयत का जन्म हुआ था और न ही इस्लाम था। सारा एशिया हिन्दू था।

द्वारिका के यादव राजा अग्रसेन ने राजसूय यज्ञ करने की योजना बनाई। इस यज्ञ को करने के लिये शर्त यह थी कि जम्बु द्वीप अर्थात् एशिया के समस्त राज्यों को अपने अधीन करने की। अत: इसके लिये दिग्विजय अभियान का सेनापति श्रीकृष्णजी के ज्येष्ठ सुपुत्र श्री प्रद्युम्न को बनाया गया। यादव वंश की १८ शाखाओं के शूरवीर उसके नेतृत्त्व में दिग्विजय अभियान में सम्मिलित हो गये। प्रद्युम्न की विजयी सेना जब कोरिया (डिमडिम देश – तत्कालीन नाम) पहुँची तो वहां चन्द्रकान्ता नदी बहती थी। हिन्दू राजा देवसुख राज्य करता था। वहां के लोग गौरवर्ण के थे। राजा ने यादव सेनापति प्रद्युम्न का स्वागत किया और उन्हें भेंट दी।

मंगोलिया में आज भी गंगाजल का पूजन होता है। जब हमारा देश विभाजित होकर स्वतन्त्र हुआ तो मंगोलिया की सरकार ने भारत की सरकार को लिखा कि भारत के साथ हमारे पुराने संबंध हैं। उनको पुन: स्थापित करने के लिये भारत से पुरातत्त्व के विशेषज्ञों का शिष्टमण्डल भेजिये। सरकार ने उनका निवेदन स्वीकार कर लिया और शिष्टमण्डल मंगोलिया जाने, देखने के लिये तैयार किया। मंगोलिया जाने के पूर्व दल का मुखिया स्व. डॉ. रघुवीर के पास गया और उसने निवेदन किया कि मैं मंगोलिया जा रहा हूँ। आप मेरा मार्गदर्शन करें क्योंकि आप चीन, मंगोलिया, रूस आदि की भाषायें जानते हैं। डॉ. रघुवीर संस्कृत के बहुत बड़े विद्वान थे और ४० भाषायें जानते थे। उन्होंने उसे कहा कि आपको सरकार आवश्यक निर्देश देगी, परन्तु आप यह ध्यान रखें कि वहां के लोग पूछेंगे कि क्या आप गंगाजल लाये हैं? अत: उनके निर्देशानुसार वह अपने साथ गंगाजल ले गया। मंगोलिया की राजधानी में शिष्टमण्डल का अच्छा स्वागत हुआ। वहां विशेषज्ञों को सम्मानित किया गया। शिष्टमण्डल के मुखिया ने भी उनको गंगाजल समर्पित करते हुए उन सभी का हार्दिक धन्यवाद किया। सभा विसर्जित हो गयी। परन्तु जनता वहीं पर रही और वह चारों ओर से शिष्टमण्डल के मुखिया की ओर दौड़ पड़ी। वह उनमें घिर गया। वह उनकी भाषा नहीं जानता था और वे इसकी भाषा नहीं जानते थे। अत: वह चिल्लाया Interpreter,! Interpreter!। वह दुभाषिया भी जनता की भीड़ में फंसा हुआ था। उसने जोर-जोर से चिल्ला कर जनता को रोका और वह मुखिया के पास आया। कहने लगा क्या बात है? उसने कहा यह लोग क्या कर रहे हैं? मेरा भारत में परिवार है। मुझे वहां वापस जाना है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो मेरी यहीं पर अन्त्येष्टि हो जायेगी। दुभाषिए ने कहा यह आपका अनिष्ट नहीं चाहते हैं। उसने कहा कि यह मेरा क्या भला चाहते हैं? दुभाषिये ने जो उत्तर दिया वह बड़ा महत्त्वपूर्ण है। ***''उसने कहा आप भारत से आये हैं और हिन्दू हैं। यहां के लोग हिन्दुओं को देवता मानते हैं। वह आपके शरीर को स्पर्श करना चाहते हैं ताकि देवता के गुण इनमें आ जायें।''*** यह उन लोगों में आन्तरिक एकता का भाव है जो अत्यन्त प्राचीन काल से परम्परा के रूप में प्रचलित है।

हिमाचल प्रदेश में कांगड़ा (हि.प्र.) के कटोच राजवंश का सतत् अस्तित्त्व दस हजार वर्षों से भी अधिक का है। इस वंश की महाभारत काल तक २३४ पीढ़ियों ने राज किया है। इस कटोच राजवंश का मूल पुरुष लगभग ११००० वर्ष पूर्व मंगोलिया से भारत आया था।

मंगोलिया की सरकार ने भारत के उपराष्ट्रपति एस. राधाकृष्णन को मंगोलिया में आमंत्रित किया। उनका वहां बड़ा स्वागत हुआ, परन्तु राधाकृष्णन जैसे मूर्धन्य विद्वान बड़े आश्चर्यचकित हुए जब उनको मालूम हुआ कि वहां के ध्वज का नाम 'स्वयम्भू' और राष्ट्रपति की उपाधि 'शम्भू' है। यह दोनों शब्द संस्कृत के हैं। वहां की भाषा में संस्कृत के शब्दों की भरमार है। हिन्दू देवी-देवताओं के वहां मंदिर है। उनके आचार-विचार,

व्यवहार और मान्यताओं पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव है।

भारतीय कालगणना के अनुसार भारतीय इतिहास का प्रथम खण्ड देवयुग है। इसकी अवधि मानवोत्पत्ति से लेकर १०,००० वर्ष है। इस में देवताओं के तीन साम्राज्य थे – क. विष्णु का साम्राज्य, ख. महादेव का साम्राज्य तथा ग. ब्रह्मा का शैक्षिक और आध्यात्मिक साम्राज्य। विष्णु का साम्राज्य उत्तरी सागर से अमेरिका तक था। श्री विष्णु प्राय: योगाभ्यास के लिये उत्तरी सागर के पार चले जाते थे और उनका सुपुत्र मंगल वहां साम्राज्य का संचालन करता था। विष्णु के साम्राज्य की राजधानी बद्रीनारायण के पास विष्णुपुरी थी। श्री विष्णु के लड़के मंगल ने मंगोलिया को बसाया। अत: आज तक चले आ रहे मधुर संबंधों का यही कारण है कि मंगोलिया मूलत: हिन्दू है और वह उस भारत का हिस्सा रहा है जो सारे विश्व का गुरु था।

रूसी स्वीकार करते हैं कि उनकी भाषा में ४० प्रतिशत शब्द संस्कृत के हैं। रूस की बालकश झील के पास रहने वाले रूसियों का विश्वास है कि गंगा का पवित्र जल उस झील में आता है। रूस की दक्षिणी सीमा के साथ स्थित Caspean Sea कश्यप ऋषि के नाम पर है।

स्टालिन के समय में भारत सरकार ने विद्वानों का एक शिष्टमण्डल रूस की यात्रा के लिये भेजा। सरकारी मार्गदर्शन में उन्होंने रूस के कई स्थान देखे बाद में उन्होंने रूसी सरकारी अधिकारियों से निवेदन किया कि वे रूस के गांवों को देखना चाहते हैं। अत: वह उनको एक गांव में ले गये। वहां के लोग एक स्थान पर एकत्रित हो गए। गांव वालों ने अतिथियों का स्वागत किया, बाद में परिचय का कार्यक्रम हुआ – दुभाषिए द्वारा। भारतीय शिष्टमण्डल में एक व्यक्ति काशी के भी थे। जब उनका परिचय हुआ तो गांव का एक सौ वर्ष से बड़ा व्यक्ति खड़ा हो गया और उसने काशी के व्यक्ति को साष्टांग प्रणाम कर कहा, ***''काशी वह पुण्य स्थान है जहां से ज्ञान और विज्ञान की किरणें सारे विश्व में गयी हैं।''*** काशी के बारे में रूसियों में इस प्रकार का श्रद्धा का भाव क्यों है? उत्तर है कि रूस विश्वगुरू भारत का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा था।

एक अन्य उदाहरण भारत में पोलैण्ड के राजदूत का है। उनको अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना द्वारा काशी में सन् १९९३ में आयोजित राष्ट्रीय अधिवेशन में मुख्य अतिथि के नाते आमंत्रित किया था। उन्होंने अपने भाषण के आरम्भ में कहा कि ***''मेरी प्रथम जन्मभूमि पोलैण्ड है और दूसरी जन्मभूमि काशी है।''***

बाल्टिक सागर के देशों, लिटविया, आस्टोनिया, लिथुआनिया की भाषाओं में संस्कृत के शब्द ८० प्रतिशत तक है, क्योंकि महाभारत काल में पूर्वी यूरोप से लेकर सिंगापुर तक संस्कृत बोली जाती थी, पढ़ी जाती थी और लिखी जाती थी।

हिमालय के अलताई पर्वत से उत्तरी सागर तक का सारा भूभाग उत्तर कुरु कहलाता था और दक्षिण का भाग दक्षिण कुरु था। इन दोनों भागों में कुरु वंश के राज्य थे।

अपने देश के चार नाम प्रसिद्ध हैं — हिन्दुस्थान, आर्यावर्त, ब्रह्मवर्त और भारत या भारतवर्ष। यह सभी नाम अपने हैं और अपने राष्ट्रीय जीवन के विकास के परिणामस्वरूप हमें मिले हैं। हम विश्वगुरु हिन्दुस्थान, आर्यावर्त या ब्रह्मवर्त के नाम से प्रसिद्ध नहीं रहे अपितु भारत के नाम से हमने विश्व का गुरुत्व किया है। यह वही भारत है जिसके मध्य में हिमालय स्थित और उसकी शाखायें और प्रशाखायें सारे एशिया को व्याप्त करती हैं। फिर हमें विचार करना होगा कि उस भारत की सीमायें कौन सी थी? इसका उत्तर ***''वेदों में भारतीय संस्कृति''*** नामक पुस्तक में इस प्रकार दिया जो ***'जो भूखण्ड भारत के नाम से विश्व का प्रथम गुरु रहा उसके चारों ओर चार सागर थे। उत्तर में क्षीर सागर (उत्तरी सागर) दक्षिण में हिन्दू सागर, पूर्व में प्रशांत महासागर और पश्चिम में भूमध्य सागर — यही वह भूभाग है जो जम्बूद्वीप या एशिया के नाम से जाना जाता है।'***

युधिष्ठिर इसी हिमालयी क्षेत्र का चक्रवर्ती सम्राट था। इस सारे क्षेत्र में हिन्दू संस्कृति के अवशेष मंदिरों, मूर्तियों, भवनों, दुर्गों, तीर्थस्थानों, प्राचीन सिक्कों, कलाकृतियों, जीवाश्मों, शिलाभिलेखों, परम्पराओं, किंवदंतियों के रूप में बिखरे पड़े हैं। इनके अध्ययन से आंतरिक एकता की टूटी हुई कड़ियाँ पुन: जुड़ सकती है।

उपरोक्त विश्वगुरु भारत से सुदूर पूर्व के देश भी प्रभावित थे। स्व. भिक्षु चमनलाल ने दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखी हैं। क. हिन्दू अमेरिका, ख. इंडिया मदर ऑफ अस आल — इंगलैंड के प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर जब पहली बार निर्वाचन में खड़े हुए थे, तो उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था — ***''भारत हम सब की माता है''।*** एक पत्रकार ने उनसे पूछा इसका क्या प्रमाण है? टोनी ब्लेयर ने (प्रधानमंत्री) ने कहा कि अंग्रेजी विद्वान Durand ने यह बात कही है। इस पुस्तक में लिखा है कि भारत के क्षत्रियों की धाक नार्वे, स्वीडन से जापान तक थी। जापान में हिन्दू वर्ण व्यवस्था पहले ही प्रचलित थी। वहां सरस्वती (ज्ञान की देवी) की पूजा होती है। जापान के एक विद्वान को जापान की विचारधारा के बारे में पूछा तो उसने अंग्रेजी में कहा — ''The study of the thought of Japan is the study of the Indian thought.''

फिलिपायन कभी पूर्णत: हिन्दू था। आज भी कहते हैं कि फिलिपायन की लोकसभा के द्वार के ऊपर मनु की मूर्ति लगी है। नीचे अंग्रेजी में लिखा है — ''The First Law-giver of Mankind''

इन स्थानों के आधार पर सारे दक्षिण-पूर्व एशिया की एकता के लुप्त अध्याय पुन: प्रकाश में लाये जा सकते हैं।

हिमालयी क्षेत्र के पूर्वी भाग के देशों का हमने सिंगापुर से वर्मा तक का विचार किया है। अब पूर्वोत्तर क्षेत्र अर्थात् मणिपुर से सिक्किम तक का भी विचार करना है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र में सात भगिनी (Sister) राज्य हैं — मणिपुर, नागालैण्ड, मिजोरम,

त्रिपुरा, मेघालय और असम। इनके अतिरिक्त पश्चिम दिशा में भूटान, उत्तर बंग और सिक्किम के तीन क्षेत्र हैं। यह क्षेत्र आजकल अशांत है और वहां पहचान का प्रश्न खड़ा हो गया है। मणिपुर में दो सरकारें हैं – नागालैण्ड में भी दो सरकारें हैं, असम में तीन हैं, त्रिपुरा की भी इसी प्रकार की हालत है। असम में ईसाई बोरो पृथक् राज्य के लिये संघर्षरत है।

अंग्रेजों ने हिन्दू समाज को विघटित करने के लिये त्रिसूत्री योजना १८५७ के युद्ध के बाद बनाई थी। क्रांतिकारी शिरोमणि लाला हरदयाल ने इसका उल्लेख अपनी पुस्तिका ''My Divine Madness'' में किया है कि १८५७ के बाद अपने साम्राज्य के संचालन और सुदृढ़ीकरण के लिये त्रिसूत्री योजना बनाई – 1. De-Hindunisation of the Hindus, 2. De-Nationalisation of the Hindus and 3. De-socilisation of the Hindus इसके अनुसार अंग्रेजों ने पूर्वोत्तर क्षेत्र के लोगों के बारे में लिखा है – वे वंशत: पांच समूहों के हैं – १. Indo-Burman २. Mangolian ३. Austrian ४. Thai and ५. Indo Tibbetan– इस विकृत इतिहास के पढ़ाए जाने के कारण वहां पहचान का प्रश्न पैदा हो गया है।

अरुणाचल प्रदेश के पूर्व राज्यपाल श्री माता प्रसाद ने ''पूर्वोत्तर के राज्य'' नामक पुस्तक में लिखा है कि पूर्वोत्तर के प्राय: सभी लोग वंशत: मंगोल हैं। उनके विचार के अनुसार असम के या पूर्वोत्तर के मूल निवासी बहुत कम हैं। प्राय: सभी बाहर से आये हैं। अरुणाचल में २० जातियाँ हैं। नागालैण्ड में ३५ हैं। इसी प्रकार से अन्य राज्यों की स्थिति है। परन्तु वास्तविकता क्या है? पूर्वोत्तर का इतिहास बताता है कि १३वीं शताब्दी से लेकर १७वीं शताब्दी तक उत्तर-पूर्व के क्षेत्र के सभी लोग इस्लाम के आक्रमणों के विरोध में एक साथ मिलकर लड़े और मुगलों को १७ बार पराजित कर उनको आगे बढ़ने नहीं दिया। यह चमत्कार कैसे हुआ? असम और आसपास के राज्यों को मुस्लिम आक्रमणकारी विजय नहीं कर सके। इसका एक मात्र कारण है कि सभी एकजुट होकर शत्रु से हिन्दू के नाते लड़े। भक्ति आन्दोलन के आचार्य शंकर महापुरुष ने पूर्वोत्तर को सुरक्षा कवच ''भक्ति'' के द्वारा प्रदान किया।

भूटान प्राय: धर्म से बौद्ध है। ८वीं शताब्दी में पद्मसंभव ने यहां बौद्ध धर्म शुरु किया। पद्मसंभव का भूटान, सिक्किम, लाहौल-स्पीति और लद्दाख में बहुत सम्मान है। वह महापुरुष मण्डी जिला के रिवालसर क्षेत्र का था। उनकी यह पहचान समन्वय का संदेश देती है।

सिक्किम में नेपाली अधिक संख्या में हैं। वह कट्टर हिन्दू हैं। वहां लेपचा जाति के भी लोग हैं। वह भी मूलत: हिन्दू ही हैं।

रामायण और महाभारत की कथायें असम और अन्य भगिनी राज्यों में प्रचलित हैं। ३०-३१ अगस्त सन् १९९८ को भारतीय इतिहास संकलन समिति ने सिल्चर

(असम) में रामायण पर दो दिवसीय राष्ट्रीय परिसंवाद का आयोजन किया। इसमें पश्चिम बंगाल, मेघालय, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा, असम के २० विद्वानों ने भाग लिया और अपने शोधग्रंथों का वाचन किया। परिसंवाद की एक स्मारिका ''Ramayan in the North-East'' के नाम से प्रकाशित की है।

कुछ वर्ष पूर्व मैं इतिहास के कार्य के बारे में असम के प्रवास पर गया। मणिपुर में भी मेरा प्रवास था। वहां विश्व हिन्दू परिषद् और वनवासी कल्याण परिषद् के कार्यकर्त्ता मिलने आये। मैंने पूछा कार्य की क्या स्थिति है। उन्होंने कहा कि वैसे तो सब ठीक ही है, परन्तु कार्य में कुछ बड़ी कठिनाई यह है कि यहां के लोग कहते हैं कि हम हिन्दू नहीं हैं। हम मंगोल हैं। मैंने कहा कि आप क्या उत्तर देते हो। उन्होंने कहा कि हम चुप रहते हैं। दूसरी कठिनाई यह है कि जब हम गांव में कार्य करने के लिये जाते हैं तो वहां ईसाई नागा विद्रोही मिलते हैं। वह हमें कहते हैं — 'अरे तुम यहां क्या करते हो? हम उत्तर देते है कि हम आपका ही कार्य करते हैं। वह फिर कहते हैं कि खबरदार और गड़बड़ मत करना।

मैंने उन कार्यकर्त्ताओं को कहा कि जब यहां के लोग कहते हैं कि हम हिन्दू नहीं मंगोल हैं तो आपको कहना चाहिये मंगोल होने के कारण आप प्रथम श्रेणी के हिन्दू हैं और हम द्वितीय श्रेणी के। उन्होंने कहा इसका प्रमाण क्या है। तो मैंने उनको बताया कि मंगोलिया को श्री विष्णु के सुपुत्र मंगल ने बसाया था। अत: मंगोलिया का मूल पुरुष श्री विष्णु का बेटा मंगल है। यह भी उनको मैंने बताया कि मंगोलिया के लोग भारत के हिन्दुओं को देवता मानते हैं। वहां पर गंगाजल का भी पूजन होता है। यह आन्तरिक एकता के बिन्दु हैं जिनकी जानकारी सभी व्यक्तियों और विशेषत: सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को देना आवश्यक है।

विदेशी मुस्लिम आक्रमणों के समय पूर्वोत्तर की एक पहचान थी हिन्दू। इसका प्रतिपादन इतिहासकारों ने नहीं किया है। पूर्वोत्तर क्षेत्र का प्राचीन इतिहास बड़ा गौरवशाली रहा है। कामरूप (असम) के असुर वंश के राजाओं ने प्राय: ३५०० वर्ष तक राज किया। इनकी राजधानी प्राग्- ज्योतिषपुर (वर्तमान गुवाहटी) थी। इस वंश के राजा भागदत्त का साम्राज्य बिहार से लेकर चीन तक था। महाभारत के युद्ध में राजा भागदत्त ९० वर्ष की आयु में अपनी १० लाख की सेना के साथ कौरवों के पक्ष में अर्जुन के साथ १२ दिन युद्ध करते हुए मारा गया था।

कामरूप (असम) का प्राग्-ज्योतिषपुर (गुवाहटी) प्राचीन काल में ज्ञान-विज्ञान विशेषत: खगोल शास्त्र के अध्ययन का दक्षिण-पूर्व एशिया का बहुत बड़ा केन्द्र रहा है। आज भी वहां की एक पहाड़ी पर आकाशीय ग्रहों के अध्ययन की एक प्रयोगशाला 'नवग्रह' के नाम से मौजूद है।

नागालैण्ड राज्य में अभी भी ५० प्रतिशत नागा हिन्दू है। ये प्राय: सारे शिव उपासक हैं। वहां बड़े-बड़े शैलों के आकार में शिवलिंग हैं। पांडव जब अपने वनवास की

यात्रा में नागा पहाड़ (पूर्व का नाम) में आये तो वहां की उलूपी नाम की नागा कन्या से अर्जुन का विवाह हुआ।

नागालैंड के वर्तमान नगर दीमापुर (पूर्व नाम हिडिम्बापुर) में हिन्दू काचारी जाति के राजाओं की राजधानी थी। वनवास की असम की यात्रा में भीमसेन का विवाह काचारी कन्या हिडिम्बा से हुआ था और इसी कारण काचारी अपने को भीम के वंशज कहते हैं।

अपने देश हिन्दुस्तान के स्वतंत्र होने के पूर्व मणिपुर में स्वतंत्र हिन्दू राज्य था। महाभारत काल से भी पुराना यह राज्य बताया जाता है। पांडव जब अपने वनवास के समय मणिपुर पहुँचे तो अर्जुन का दूसरा विवाह वहां की राज कन्या चित्रांगदा से हुआ। वहां के मणिपुरी हिन्दू आज भी स्वाभिमान करते है कि हम पांडवों के चन्द्रवंश से जुड़े हैं।

ब्रह्मपुत्र नदी के दक्षिण तट पर पश्चिम की ओर एक मन्दिर पांडवों के नाम से है। मेघालय में खासिया नाम की हिन्दू जाती है। इनमें से ५० प्रतिशत ईसाई हो गये हैं। "तारीखे राजगाने कदीम आर्यवर्त" में लिखा है कि देवताओं के वंश की एक खस नामक महिला से खासिया जाति का जन्म हुआ था। इसी जाति के एक परिवार के प्रसिद्ध व्यक्ति महामसिंह के पिता ने गीता का अनुवाद खासिया भाषा में किया था।

जंमतिया भी मेघालय की प्रमुख जाति है। इसका अपना राज्य रहा है। इनमें से कुछ ईसाई हो गये हैं। जंमतीया में दुर्गा पूजा का उत्सव मनाया जाता है। काली का भी पूजन होता है। इनका संपूर्ण जीवन हिन्दू है।

मेघालय की तीसरी प्रमुख जाति गारो है। इनमें से काफी संख्या ईसाई हो गई है। बाकी सभी हिन्दू है। इनके रीति-रिवाज हिन्दू ही हैं। पूर्व में मिजोरम राज्य भी असम का ही एक जिला था। इसमें अधिकांश लुशाई ईसाई हो गये है। परंतु ईसाई होने पर भी हिन्दू संस्कार उनमें अभी तक भी समाप्त नहीं हुए हैं। जब कुछ वर्ष पूर्व गुवाहटी में रामायण पर एक परिसंवाद का आयोजन किया गया था तो इसमें भाग लेने के लिए मिजोरम का भी एक ईसाई विद्वान आया था। परिसंवाद के संयोजक ने उन्हें पूछा कि तुम तो ईसाई हो और परिसंवाद रामायण पर है। उसने उत्तर दिया कि हम ईसाई हो गये हैं तो क्या हुआ। हम रामायण को भूल नहीं सकते, क्योंकि राम चन्द्र के भाई लक्ष्मण ने हमारे पूर्वजों को धान की खेती करने की विधि सिखाई थी।

अरुणाचल प्रदेश हिमालय की गोद में बसा है। इसमें अपातानी, मिसमी, डफला, मीरी आदि २० प्रमुख जातियां हैं। यह क्षेत्र भी पहले असम में ही था। यहां पर पूर्व में असम के हिन्दू सूतियावंश का राज्य था और अरुणाचल प्रदेश की वर्तमान राजधानी ईटानगर उनकी राजधानी थी। अंग्रेजों ने इसे असम से पृथक् कर दिया।

मिसमी अरुणाचल प्रदेश की एक प्रमुख जाति है। यह सभी गोरे रंग के होते हैं और सिर पर मयूर के पंखों का मुकुट धारण करते है और यह अपने को रुक्मिणी के वंशज कहते हैं। रुक्मिणी के पिता भिष्मक का भिष्मक नगर अरुणाचल प्रदेश में पूर्व की

ओर था। इस नगर के अब केवल अवशेष बाकी हैं।

इस शोधपत्र के गत पृष्ठों में हिमालयी क्षेत्र की एकता के आंतरिक सूत्रों पर ऐतिहासिक संदर्भ में प्रकाश डाला गया है। परंतु दिव्य हिमालय का इतना ही योगदान नहीं है।, अपितु वह सारे विश्व में फैली मानवों की आंतरिक एकता का भी घोष 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के नाते करता है।

पाश्चात्य नृशास्त्रियों ने सारे विश्व के मानवों को वंशत: तीन वर्गों में विभक्त किया है — यथा आर्य, मंगोल और हवशी। इन तीनों वर्गों के लोगों की शारीरिक रचना, रंग, कद इत्यादि के बारे में जो लिखा है वह इस प्रकार है :—

आर्य : कद लम्बा, रंग गोरा, आंखें बड़ी-बड़ी, मुख का आकार लम्बूतरा, नाक नुकीली।

मंगोल : कद छोटा, शरीर गठीला, रंग पीला, सिर गोल, आंखे छोटी, दाड़ी और मूछों के बाल कम और नाक चपटी।

हवशी : रंग काला, कद ऊँचा, होंठ ऊपर की ओर उठे हुए इत्यादि। इनके रहने के क्षेत्रों के बारे में लिखा है कि हिन्दुस्तान से आरम्भ कर पश्चिम में इंग्लैंड तक के लोग आर्य हैं। हिन्दुस्तान से पूर्व की ओर जापान तक के निवासी मंगोलियन हैं। हवशियों का वास स्थान अफ्रीका है।

भारतीय प्राणीशास्त्र, मानवों के उपरोक्त वर्गीकरण को अस्वीकार करता है। इसके अनुसार प्राणी ८४ लाख योनियों को पार कर मनुष्य के नाते जन्म लेता है और वह मूलत: एक ही जोड़े से उत्पन्न हुआ है।

इस पृथ्वी का वह पुण्य क्षेत्र जहां पहले मानव का आविर्भाव हुआ, संस्कृत में उसके ९ नाम हैं और वह हिमालय के मध्य में सुमेरू पर्वत पर स्थित है। यह पवित्र भू-भाग हिन्दुस्तान के वर्तमान कश्मीर प्रदेश, तिब्बत, कैलाश पर्वत और मानसरोवर के मध्य स्थित है। गंगा इसी सुमेरू पर्वत से उतर कर गंगोत्री से निकलती है। यह क्षेत्र त्रिकोणात्मक है और चारों और से दुर्गम्य पर्वत शृंखलाओं से घिरा है। इसके नाम इस प्रकार है:— खे, द्यो लोक, देव लोक, देवसर, बिन्दुसर, तिरोशलिया, तिरोवालिया, नाक, त्रिविष्टप।

भारतीय वैज्ञानिक कालगणना बताती है कि आज से १,९७,२९,४९,११२ वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को पहले मानव का प्रादुर्भाव उपरोक्त क्षेत्र में हुआ और वह भी हिमालय के अंतर्गत भारत में। आज इस पुण्य भू-भाग पर चीन ने अधिकार कर लिया है। यही वह भू-स्थल है जहां से सभी जातियों, सभी राष्ट्रों, सभी धर्मों, ज्ञान-विज्ञान और सभी शास्त्रों का उदय हुआ है।

मानवोत्पत्ति की उपरोक्त अवधारणा से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य कद से चाहे लम्बा हो या छोटा हो, काले रंग का हो या गोरे रंग का, बड़ी आँखों वाला हो या

छोटी आँखों वाला, चपटे नाक वाला हो या नोकीले नाक वाला हो, वह मूलत: एक ही वंश अर्थात् मानव वंश का है। इसी वैज्ञानिक तथ्य के आधार पर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के मानवीय एकता के वैज्ञानिक सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ और दिव्य हिमालय विश्व के सर्व मानवों की आन्तरिक एकता का यही संदेश–वसुधैव कुटुम्बकम् है।

संदर्भ पुस्तकें :

१.	Discover India Series-The Himalayas	:	Navnit Parekh
२.	Uttarakhand-Garhwal, Himalayas	:	K.S.Fonia
३.	Greater India	:	Arun Bhattacharjee
४.	Hindu Colonies in the Far-East	:	R.C.Majumdar
५.	Exploration in Tibbet	:	Swami Pravanand
६.	कैलाश, मानसरोवर	:	ब्रजराज शरण गुप्त
७.	विश्वव्यापी भरतीय संस्कृति	:	श्री रघुनन्दन प्रसाद शर्मा
८.	मणिमहेश	:	उमा प्रसाद मुकर्जी
९.	प्राचीन भारत का प्रमाणिक इतिहास	:	पन्ना लाल गुप्त
१०.	वेदों में भरतीय संस्कृति	:	संपूर्णानंद, हिन्दी अकादमी (उ.प्र.)
११.	पूर्वोत्तर के राज्य	:	माता प्रसाद (पूर्व राज्यपाल, अरुणाचल प्रदेश)
१२.	विश्व गुरु	:	भंडारी हुल्कर, हिन्दी अकादमी इन्दौर (म.प्र.)
१३.	तारीखे राजगाने कदीम आर्यवर्त(उर्दू)	:	डॉ. नगीना राम परमार

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधिऽवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।

कुमारसम्भवम् १/१

उत्तर दिशा में देवतात्मा हिमालय नामक पर्वतों का राजा पूर्व और पश्चिम के समुद्रों तक फैला हुआ है जो पृथ्वी के मानदण्ड की तरह स्थित है।

संविधान की मूल भावना है अखण्ड भारत

कृष्णानन्द सागर

भारतवर्ष के लाखों-करोड़ों वर्षों के इतिहास में सन् १९४० से पहले कभी भी 'अखण्ड भारत' शब्द का प्रयोग नहीं हुआ। न तो आदिकालीन वेदों में, न त्रेताकालीन रामायण में, न द्वापरकालीन महाभारत में, न पुराणों में, न कलियुगीन बौद्ध ग्रन्थों में, न जैन ग्रन्थों में, न दक्षिण के आलवार साहित्य में, न उत्तर के सिख साहित्य में। यहाँ तक कि कौटिल्य अर्थशास्त्र, चचनामा, राजतरंगिणी और पृथ्वीराजरासो जैसे ऐतिहासिक ग्रन्थों में भी नहीं। जहाँ भी प्रयोग हुआ है, वह भारत शब्द है, 'अखण्ड भारत' नहीं।

आखिर १९४० में ऐसा क्या हो गया कि परम्परा से चले आ रहे 'भारत' शब्द के साथ उस समय के कुछ लोगों को 'अखण्ड' शब्द भी जोड़ना आवश्यक लगने लगा और अनेक नेताओं ने 'अखण्ड भारत' शब्द का प्रयोग अपने भाषणों में करना आरम्भ कर दिया। इस पर विचार किया ही जाना चाहिए।

वास्तव में 'भारत' कहते ही आसेतु हिमाचल एक विशाल पावन भूखण्ड की परिकल्पना हमारे मस्तिष्क में उभर आती है। इस भूखण्ड को तीन ओर से समुद्र ने घेर रखा है और चौथी ओर से हिमालय अपनी दोनों लम्बी भुजाओं को फैलाकर पूर्व और पश्चिम दोनों दिशाओं से हिन्दमहासागर को स्पर्श कर रहा है। इस सम्पूर्ण भू-प्रदेश में ५२ दैवी ऊर्जा स्थल हैं, जहां से निरन्तर दैवी ऊर्जा प्रवाहित होती रहती है। इन स्थलों को 'शक्तिपीठ' कहा जाता है। इसी प्रकार शिव-तत्त्व को प्रकट करने वाले १२ ज्योतिर्लिंग भी इसी भूमि पर विद्यमान हैं। ये शक्तिपीठ और ज्योतिर्लिंग विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं हैं। छ: की छ: ऋतुएँ भी प्रतिवर्ष केवल इसी भूमि पर ही बारी-बारी से आती हैं और इसे अन्नपूर्णा बनाती हैं। ये सब विशेषताएँ इस भूमि को ईश्वर-प्रदत्त हैं और इसलिए इसे 'विष्णुप्रिया' भी कहा जाता है। इस कारण हम इस भूमि के वासी इसे भारतमाता कहकर पुकारते हैं और इसी रूप में इसकी आराधना करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। 'भारत' कहते ही यह सर्वांग सुन्दर अन्नपूर्णा भारतमाता ही हमारे पूर्वजों के मानस पटल पर प्रकट होती थी और आज तक हम भी इसी शब्द में उस माता के दर्शन करते हैं।

दुर्भाग्य से इस देश के मुस्लिम वर्ग ने कभी भी इसे 'माता' नहीं माना। १९४० में इनकी संख्या भारत में लगभग आठ-नौ करोड़ थी। १८८५ से लेकर १९३९ तक इन्हें प्राय: अल्पसंख्यक कहा जाता था, लेकिन १९४० में इन्हें अकस्मात् ही अलग राष्ट्र

(Separate Nation) की संज्ञा दे दी गई।

मौलाना आजाद ने कांग्रेस के रामगढ़ अधिवेशन में अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा, ''भारतीय राजनीति के ताने-बाने में यह बात सत्य से कोसों दूर है कि भारत में मुसलमानों की स्थिति राजनीतिक अल्पसंख्यकों की है। भारत में मुसलमान आठ-नौ करोड़ के लगभग हैं। जिन सामाजिक अथवा जातीय विभेदों से अन्य समुदाय ग्रस्त हैं, मुसलमान उनसे ग्रस्त नहीं हैं सामाजिक विभेदों से जो दुर्बलता पैदा होती है, उनसे बहुत कुछ रक्षा इस्लामी भाईचारे और समता के सशक्त बन्धन कर देते हैं। ... यदि इस समय हमें विवश होकर साम्प्रदायिक समूहों के आधार पर इस प्रश्न पर विचार करना ही पड़े तो भी मुसलमानों की स्थिति केवल अल्पसंख्यक की नहीं है। यदि वे सात प्रान्तों में अल्पसंख्या में हैं तो पाँच में उनका बहुमत है। ऐसी स्थिति में कोई कारण नहीं है कि वे अल्पसंख्यक की भावना से ग्रस्त हों।'' (शेषाद्रि ''और देश बंट गया'', पृ. १४७-४८)

'मुसलमान अल्पसंख्यक नहीं हैं, मौलाना की इस नवीन अवधारणा को मुस्लिम लीग ने तुरन्त लपक लिया और उसी को आगे बढ़ाते हुए मुहम्मद अली जिन्ना ने मार्च के चौथे सप्ताह के मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा, ''मुसलमान अल्पसंख्या में नहीं हैं, जैसा कि सामान्यत: समझा जाता है। राष्ट्र की किसी भी परिभाषा के अनुसार मुसलमान एक राष्ट्र है और उनका अपना गृहदेश, उनका अपना राज्यक्षेत्र और अपना राज्य होना चाहिए।'' इसी बात की पुष्टि मुस्लिम लीग ने इसी अधिवेशन में २३ मार्च, १९४० को एक प्रस्ताव पारित करके कर दी जिसे बाद में 'पाकिस्तान प्रस्ताव' कहा गया। यद्यपि मुस्लिम लीग के अधिकृत प्रस्ताव में 'पाकिस्तान' शब्द कहीं भी नहीं आया, किन्तु प्रस्ताव का सीधा अर्थ यही था कि भारत को खण्डित करके मुसलमानों के लिए अलग स्वतन्त्र राज्य बना दिया जाए।

यह बात देशभक्तों के लिए अत्यन्त पीड़ादायक थी। इस पीड़ा में से ही भारत को अखण्ड रखने का संकल्प लोगों के हृदयों में उद्‌भूत हुआ और 'अखण्ड भारत' शब्द प्रचलित हुआ। कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने तो भारत की अखण्डता को बचाने के लिए १९४०-४१ में कांग्रेस से अलग एक विधिवत् 'अखण्ड भारत मोर्चा', ही गठन कर डाला। भारत को खण्डित करना एक अदूरदर्शी और अव्यावहारिक कदम होगा, यह सिद्ध करने के लिए डॉ. राजेंद्रप्रसाद ने १९४५ में 'इण्डिया डिवाइडेड' नाम से ग्रन्थ भी लिख डाला। वीर सावरकर और डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने भारत को अखण्ड रखने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया। महामना मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन खण्डित भारत के विचारमात्र से ही क्षुब्ध हो उठे। महात्मा गांधी ने तो यहां तक कह दिया कि ''पाकिस्तान मेरी लाश पर ही बनेगा।''

इस सबके बावजूद १५ अगस्त, १९४७ को भारत स्वतन्त्र होने के एक दिन पूर्व ही पाकिस्तान नाम का शत्रु राज्य भारत की छाती पर बना दिया गया, यानी भारत

खण्डित कर दिया गया जिसके परिणामस्वरूप २० लाख लोग मारे गए और लगभग दो करोड़ लोग विस्थापित हुए। विभाजन का यह दंश आज तक हम सब भुगत रहे हैं। कश्मीर समस्या, आसाम समस्या, आतंकवाद की समस्या आदि समस्याएँ भारत-विभाजन का ही परिणाम हैं।

इसलिए १९४७ से पहले जहां देश के विचारशील लोगों के सामने यह प्रश्न था कि अखण्ड भारत को 'खण्डित' होने से कैसे बचाया जाए, वहीं आज के विचारशील लोगों के सामने यह प्रश्न है कि खण्डित भारत को पुन: 'अखण्ड' कैसे बनाया जाए? अखण्ड भारत की अनिवार्यता को समझने के लिए हमें पहले 'राष्ट्र और 'राज्य' के प्रति भारतीय दृष्टि को समझने की आवश्यकता है।

राष्ट्र और राज्य

राष्ट्र के मुकाबले राज्य अत्यन्त ही सामान्य इकाई है। राष्ट्र एक महती इकाई है। इसके अन्तर्गत देश, देश में रहने वाला ऐसा समाज जो अपने आपको उस देश का पुत्र मानता हो, उस समाज की अपनी संस्कृति, इतिहास, पवित्र भाषा, साहित्य, प्रेरक महापुरुष आदि आते हैं। इन बातों के बिना हम किसी राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सकते।

राष्ट्र एक जीवमान इकाई

राष्ट्र कोई दृश्यमान वस्तु नहीं, तो भी वह एक जीवमान इकाई है। इस इकाई को यदि हम शरीर मान ले तो इस शरीर का प्राण है धर्म, रक्त है संस्कृति, अस्थिपंजर है देश, माँस-मज्जा है जनसमाज तथा स्नायुमण्डल है भाषा, साहित्य, इतिहास आदि। इस प्रकार यह सर्वांगपूर्ण शरीर है। इस शरीर में चैतन्य है, बुद्धि है, बल है। किन्तु यह है वस्त्रहीन। राज्य इसके वस्त्र के रूप में है। मनुष्य शरीर पर जो काम वस्त्रों का होता है, वही काम राष्ट्र शरीर पर राज्य का होता है। साफ-स्वच्छ वस्त्र पहने हों तो व्यक्ति सम्मान पाता है और वही व्यक्ति अगर मैले-कुचैले अथवा फटे-पुराने वस्त्र पहनने लगे तो लोग उसे हेय दृष्टि से देखेंगे। इसी प्रकार सुराज्य वाला राष्ट्र अत्यन्त सम्मानित होता है तथा कुराज्य वाले राष्ट्र को जगह-जगह अपमानित होना पड़ता है। सुराज्यरूपी स्वच्छ वस्त्र राष्ट्र के स्वास्थ्य को बनाए रखता है तथा कुराज्यरूपी मलिन वस्त्र राष्ट्र के स्वास्थ्य को बिगाड़ देता है।

सुराज्य के साथ स्वराज्य जरूरी

दूसरों के वस्त्र पहनने वाला व्यक्ति जिस प्रकार से निकृष्ट माना जाता है, वैसे ही विदेशी राजसत्ता को अपनाने वाला राष्ट्र भी निकृष्ट समझा जाता है। अत: सुराज्य के साथ-साथ स्वराज्य भी चाहिए। स्वराज्य में यदि कुछ दोष भी हों, तो भी वह विदेशी सुराज्य से श्रेयस्कर है। साधारण किन्तु अपने ही वस्त्र पहने हुए व्यक्ति उन्नत ग्रीवा होकर चलता है तथा कीमती, किन्तु दूसरे के वस्त्र पहने हुए व्यक्ति आत्मग्लानि से पीड़ित रहता

है और कभी किसी की श्रद्धा का पात्र नहीं बन पाता। रवीन्द्रनाथ ठाकुर का भाषण टोक्यो विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने इसलिए सुनने से इन्कार कर दिया था कि रवीन्द्रनाथ गुलाम देश के व्यक्ति थे। इसलिए राज्य होना आवश्यक है। राज्य भी सुराज्य होना चाहिए। सुराज्य भी राष्ट्र की प्रकृति के अनुरूप हो, अर्थात् स्वराज्य हो।

राष्ट्र शाश्वत, राज्य परिवर्तनशील

राष्ट्र में एक राज्य भी हो सकता है, अनेक राज्य भी हो सकते हैं। जैसे सारे शरीर पर एक ही वस्त्र लम्बा चोला अथवा धोती भी पहनी जा सकती है और अनेक वस्त्र-टोपी, कुर्ता, पायजामा, दसताने, जुराबें आदि भी पहने जा सकते हैं।

भारत दुनिया का प्राचीनतम राष्ट्र है। विभिन्न कालों में एक ही समय अनेक राज्य इसमें रहते ही रहे हैं। रामायण काल में अयोध्या, मिथिला, किष्किंधा आदि कितने ही राज्य थे। महाभारत काल में भी अंग, मत्स्य, मद्र, कुरु, मथुरा, विराट, पांचाल, सिन्धु आदि विभिन्न राज्य थे। उसके बाद भी पंचनद, द्विगर्त, त्रिगर्त, सौवीर, मगध, कलिंग, मदुरई, मालव, विजयनगर, सौराष्ट्र सिन्ध आदि अनेक राज्य रहे हैं। अनेक राज्य होने पर भी राष्ट्र जीवन में कोई अन्तर नहीं आता क्योंकि उन सभी राज्यों में राष्ट्र की संस्कृति, धर्म, साहित्य आदि वही रहते हैं। राज्य बनते हैं, बिगड़ते है, राष्ट्र वही रहता है।

राज्य के बदलने से राष्ट्र नहीं बदलता, जैसे वस्त्रों के बदलने से शरीर नहीं बदलता। भारत राष्ट्र मुस्लिम राज्य में मुस्लिम राष्ट्र और अंग्रेजी राज्य में अंग्रेजी राष्ट्र नहीं बना। इसी तरह कांग्रेस का राज्य आने पर कांग्रेसी राष्ट्र और भाजपा का राज्य आने पर भाजपा राष्ट्र भी नहीं बना। अनेक राज्य आएंगे और चले जाएंगे, राष्ट्र की धारा अक्षुण्ण बनी रहेगी।

स्वदेशी और विदेशी राज्य

राष्ट्र में एक ही समय कुछ राज्य स्वदेशी और कुछ राज्य विदेशी भी हो सकते हैं। किन्तु ऐसे समय राष्ट्रीय लोगों द्वारा उन विदेशी राज्यों को उखाड़ फैंकने के प्रयत्न चलते रहते हैं। सिकन्दर के नेतृत्त्व में यूनानियों ने भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था और बाद में उन्हें वहां से भगा भी दिया गया। जब तक वहाँ यूनानियों का राज्य रहा, तब तक वह क्षेत्र भारत राष्ट्र न होकर यूनान राष्ट्र था, ऐसा कहना हास्यास्पद होगा।

१५ अगस्त, १९४७ के बाद का यदि भारत का मानचित्र देखा जाए, तो उस समय भारत राष्ट्र में सैकड़ों राज्य थे। इनमें से दो राज्य प्रमुख बन गए — भारत और पाकिस्तान। शेष राज्यों में से अधिकांश भारत राज्य में विलीन हो गए तथा कुछ पाकिस्तान राज्य में। तब भी गोवा पुर्तगाली राज्य और पाण्डिचेरी फ्रांसीसी राज्य बने रहे। ये दोनों राज्य कई वर्षों के बाद स्वतन्त्र कराए जा सके और भारत राज्य में मिल गए।

पाकिस्तान राज्य

इस प्रकार यह बात विशेष रूप से समझ लेने योग्य है कि पाकिस्तान भी एक राज्य है, राष्ट्र नहीं। भारत राष्ट्र में भारत राज्य एक स्वदेशी राज्य है और पाकिस्तान विदेशी राज्य। यदि पाकिस्तान को भी राष्ट्र मान लिया जाए तो पूर्वी बंगाल को क्या कहेंगे? क्या ऐसा कहा जा सकता है कि १९४७ से पहले तक पूर्वी बंगाल भारत राष्ट्र था, १९४७ में वह पाकिस्तान राष्ट्र बन गया और १९७१ में बंगला राष्ट्र हो गया।

राष्ट्र कभी ऐसे नहीं बदलते। राष्ट्र का सम्बन्ध संस्कृति, साहित्य और परम्परा से होता है। राज्य का सम्बन्ध सत्ता से होता है। पाकिस्तान और बंगलादेश आदि में केवल सत्ताएँ बदली हैं : संस्कृति, इतिहास और परम्परा नहीं।

भारत राज्य

जिसे आज हम भारत अथवा इण्डिया कहते हैं, वह भी केवल भारत राज्य है, भारत राष्ट्र कहते ही हमारे सम्मुख भारत माता का सर्वांगपूर्ण चित्र उपस्थित होता है, वर्तमान कटे-फटे भारत राज्य का नहीं। वह चित्र है :

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र संततिः।।

संविधान की भावना

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद नया संविधान बनाने का कार्य प्रारम्भ हुआ तो राष्ट्र और राज्य के अन्तर को हमारे संविधान निर्माताओं ने पूरी तरह दृष्टि में रखा था। उन्हें यह पूर्ण ध्यान था कि संविधान राज्य का ही होता है, राष्ट्र का नहीं। इसीलिए उन्होंने उसमें 'इण्डिया इज़ ए सावरेन स्टेट' (भारत एक प्रभुसत्ता सम्पन्न राज्य है) कहा। यहाँ 'स्टेट' शब्द महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने 'नेशन' (राष्ट्र) शब्द का प्रयोग नहीं किया।

लेकिन राष्ट्र की कल्पना भी उनके सामने थी, इसलिए अपने देश का गीत निश्चित करते समय उसे नाम दिया गया नेशलन एन्थम एवं नैशनल सांग (राष्ट्र गान एवं राष्ट्र गीत)। यहाँ 'नैशनल' शब्द का प्रयोग किया गया है। यह गीत भी भारत माता की वन्दना है —

वन्दे मातरम् वन्दे मातरम्।
सुजलाम् सुफलाम् मलयज शीतलाम्।
शस्य श्यामलाम् मातरम्।।
शुभ्रज्योत्सनां पुलकित यामिनीम्।
फुल्ल कुसुमित द्रुमदल शोभिनीम्।
सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीम्।
सुखदां वरदां मातरम्।।

इसी भारत माता की स्पष्ट कल्पना दूसरे गीत में दे दी गई :

जन गण मन अधिनायक जय हे भारत भाग्य विधाता।
पंजाब, सिंध, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल, बंग।
विन्ध्य, हिमाचल, यमुना, गंगा, उच्छल जलधि तरंग।
तव शुभ नामे जागे, तव शुभ आशिष मांगे।
गाहे तव जय गाथा।

द्रष्टव्य है कि संविधान बनाते समय आधे से अधिक पंजाब, पूरा सिन्ध तथा आधे से अधिक बंगाल पाकिस्तान में थे। फिर भी संविधान निर्माताओं ने इन शब्दों को राष्ट्रगान से निकाला नहीं। कारण, वे जानते थे कि वन्दना राष्ट्र की ही की जाती है, राज्य की नहीं। ये क्षेत्र भले ही भारत राज्य के अंग नहीं, भारत राष्ट्र के तो हैं।

भावी पीढ़ियों को दिशा-निर्देश

अत: संविधान निर्माता राष्ट्रगान के माध्यम से भावी पीढ़ियों को यह दिशा-निर्देश कर गए हैं कि अभी भारत खण्डित है, उसे अखण्ड बनाना है। इस गीत में वर्णित पंजाब, सिन्ध, बंगाल आदि पूरे क्षेत्रों पर जब तक यह संविधान लागू नहीं होता, तब तक हमारी स्वतन्त्रता अधूरी है।

भारत का विभाजन किस विवशता के कारण तत्कालीन नेताओं ने स्वीकार किया, यह तो इतिहास-शोधकों का विषय है, लेकिन यह सत्य है कि विभाजन की व्यथा उन सब नेताओं के हृदयों को कचोटती रही। इस भूल के परिमार्जन की प्रवल इच्छा भी उनके मनों में रही और फलस्वरूप संविधान बनाते समय इस 'इच्छा' को उन्होंने राष्ट्रगान के माध्यम से संविधान में सम्मिलित कर दिया।

इस प्रकार संविधान की मूल भावना अखण्ड भारत की है। अत: भारत को अखण्ड बनाना हमारा संवैधानिक दायित्व है। इस दायित्व की पूर्ति कब और कैसे होगी, केवल यही विचार का विषय रह जाता है।

एफ. — १०९, सैक्टर — २७
नोएडा — २०१३०१

महामना मदनमोहन मालवीय

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

जिन महापुरुषों ने भारतवर्ष को सब प्रकार की पराधीनता से मुक्ति दिलाकर उसे स्वतन्त्र और सम्मानित राष्ट्र बनाने के प्रयत्न किए हैं उनमें महामना मालवीय जी का नाम अग्रगण्य है। इनके बारे में महात्मा गांधी जी ने लिखा था कि ''उनका भीतरी जीवन बहुत-बहुत विशुद्ध था। वे दया के भण्डार थे। उनका शास्त्रीय ज्ञान विस्तृत था, भागवत उनकी प्रिय पुस्तक थी। वे चेतन कथाकार थे, उनकी स्मरणशक्ति तेजस्विनी, जीवन शुद्ध और सादा था। वे भारत के लिए उत्पन्न हुए और भारत के लिए गए। अपने कामों में वे जीते हैं। उनके बहुत काम हैं बड़े, पर सब से बड़ा है हिन्दू विश्वविद्यालय।''

सन् १८६१ का साल भारतवर्ष के लिए बड़ा शुभ था। इसी साल कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म हुआ। इसी साल पं. मोतीलाल नेहरू पैदा हुए और इसी साल पं. मदनमोहन मालवीय जी भी उत्पन्न हुए। तीनों ने ही भारतमाता का नाम उजागर किया।

मालवीय जी का जन्म सन् १८६१ में २५ दिसम्बर को इलाहाबाद के प्रतिष्ठित किन्तु निर्धन ब्राह्मण परिवार में हुआ। इनके पूर्वज कभी मालवा से आकर इलाहाबाद में बस गए थे। इसी लिए वे लोग मालवीय कहलाए। इसके पिता पं. ब्रजनाथ चतुर्वेदी संस्कृत के बहुत अच्छे विद्वान थे। वे बहुत अच्छे कथावाचक थे। लोग उनकी कथा सुनने के लिए दूर-दूर से आया करते थे। मदनमोहन अपने पिता के सबसे छोटे पुत्र थे। उनके पांच भाई और दो बहनें थीं। घर में संस्कृत का वातावरण था। बालक मदनमोहन को धार्मिक विश्वास और सदाचार विरासत में मिले थे।

शुरू-शरू में उनका संस्कृत और हिन्दी की पढ़ाई का प्रबन्ध घर पर ही किया गया था। बाद में प्रयाग (इलाहाबाद) की धर्मज्ञानोपदेश पाठशाला में संस्कृत पढ़ने के लिए दाखिल कराया गया। उन दिनों कोलकत्ता विश्वविद्यालय से यह स्कूल संबद्ध था। सन् १८८४ में बालक मदन मोहन ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा पास की और सन् १८८४ में उसी विश्वविद्यालय से बी.ए. परीक्षा पास की। उनकी पढ़ाई आगे नहीं चल सकी। घर की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। पं. ब्रजनाथ जी जो कुछ उपार्जन कर सकते थे उससे गृहस्थी का खर्च चलाना कठिन हो रहा था। इसलिए माता के इशारे पर मदनमोहन ने एक स्कूल में शिक्षक का काम शुरू किया। शुरू-शुरू में उन्हें ४० रुपये मासिक मिलते थे। परन्तु अपने परिश्रम से उन्हें अध्यापन में बहुत यश मिला। उनका वेतन

बढ़ते-बढ़ते १०० रुपये मासिक हो गया।

लेकिन परमात्मा ने मदनमोहन को बड़े काम के लिए बनाया था। सन् १८८६ में कांग्रेस का दूसरा जलसा था। मदनमोहन वहां गए और उनकी जादूगरी वाणी ने लोगों को बड़ा प्रभावित किया। कालाकांकर के राजा रामपालसिंह बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने हिन्दुस्तान नाम का एक हिन्दी पत्र निकाला था। वे राष्ट्रीय विचार के व्यक्ति थे। परन्तु उनमें एक दुर्गुण भी था। वे शराब पीया करते थे। उन्होंने मालवीय जी से हिन्दुस्तान का सम्पादक बनने का अनुरोध किया। मालवीय जी ने स्वीकार तो कर लिया पर इस शर्त पर कि शराब पीने की हालत में उन्हें राजा साहब नहीं बुलाएँगे। मालवीय जी अढ़ाई साल तक उस 'दैनिक पत्र' का बड़ी योग्यता से सम्पादन करते रहे, पर एक दिन राजा साहब ने नशे की हालत में उन्हें बुलवा लिया। शर्त टूट गई। सदाचार के मूर्तिमान् रूप मालवीय जी ने उस पत्र का सम्पादन छोड़ दिया। वे घर लौट आए। राजा साहब गुणग्राही थे। उन्होंने अपनी गलती महसूस की। वे मालवीय जी को वकालत पढ़ने के लिए १०० रुपए मासिक की सहायता देते रहे। मालवीय जी अब वकालत पास करके वकील बन गए। उनकी वाक्‌शक्ति और उनके सदाचार ने वकालत में उन्हें सहायता दी। वे अच्छे वकीलों में गिने जाने लगे। पर उन्होंने, जब शिक्षक थे तब भी और जब सम्पादक या वकील बने तब भी लोगों का कष्ट दूर करने और बुरी बातों को सुधारते रहने के प्रयत्न में कोई बात की कमी नहीं रखी। उनका सारा समय देश की जनता की सेवा में लगता था। कुछ समय के लिए अंग्रेजी के 'इंडियन यूनियन' नामक पत्र में भी काम किया। उनके निष्पक्ष और निर्भीक लेखों ने उनकी कीर्ति दूर-दूर तक फैला दी। कुछ दिन बाद उन्होंने हिन्दी में 'अभ्युदय' नामक पत्र स्वतन्त्र रूप से निकाला। अंग्रेजी के प्रसिद्ध दैनिक 'लीडर' के निकालने वालों में भी वे प्रमुख थे। यह पत्र आज भी चल रहा है। इसी पत्र के कार्यालय से बाद में 'भारत' नामक दैनिक पत्र भी निकाला। देश के दो प्रमुख दैनिकों के अतिरिक्त हिन्दी और अंग्रेजी की कई प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं के निकालने में भी मालवीय जी का हाथ था। १९१० ई. में 'मर्यादा' निकली जो अपने राजनीतिक लेखों के कारण प्रसिद्ध थी। दिल्ली का प्रसिद्ध पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' भी मालवीय जी के प्रयत्नों का फल है।

मालवीय जी के हृदय में भारतीय संस्कृति और सभ्यता का बड़ा मान था। वे यह देखकर बहुत कष्ट अनुभव करते थे कि देश के नवयुवक विदेशी प्रभाव में पड़कर गलत ढंग का आचार सीख रहे हैं। उन्हें अपने देश के गौरव का ज्ञान नहीं है। अपने धर्म के उचित पक्ष से वे अपरिचित हैं और उन्हें जो शिक्षा मिलती है उसमें सदाचार का कोई स्थान नहीं है। परन्तु मालवीय जी केवल सोचने वालों में नहीं थे। वे कुछ ऐसा करना चाहते थे जिससे इस अवस्था में सुधार हो। उन्होंने इलाहाबाद में एक 'हिन्दू बोर्डिंग हाउस' बनवाया। उसके लिए उन्होंने देश के धनी-मानी लोगों से धन एकत्र किया। उनके

पवित्र जीवन और निष्काम सेवाभाव से लोग बहुत प्रभावित थे। दिल खोलकर लोगों ने दान दिया। मालवीय जी चाहते थे कि हिन्दू-बोर्डिंग हाउस में रहकर विद्यार्थी अपने देश के प्रति प्रेम और अपनी प्राचीन संस्कृति के प्रति श्रद्धा करना सीखेंगे। इसी महान् उद्देश्य को मन में रखकर मालवीय जी ने यहां भारतीय ढंग का वातावरण बनाने का प्रयत्न किया। इसमें २५० विद्यार्थियों के रहने का प्रबन्ध था। यह बोर्डिंग हाउस अब भी है।

उन दिनों कचहरियों में केवल 'उर्दू लिपि' का वातावरण होता था। मालवीय जी ने देखा कि जिन लोगों को कचहरी से काम पड़ता है, वे उर्दू लिपि नहीं जानते थे, तो देवनागरी लिपि जानते हैं। देवनागरी लिपि बहुत शुद्ध लिपि है। इसे जैसे बोला जाता है प्राय: ज्यों का त्यों वही लिखा भी जाता है और जो लिखा जाता है, वही पढ़ा भी जाता है। इसलिए उन्होंने कचहरियों में देवनागरी लिपि को स्वीकार कराने के लिए बड़ा परिश्रम किया। उनका पक्ष उचित था। पर इसके लिए उन्हें बहुत परिश्रम करना पड़ा। जनता उनके पक्ष में थी। मालवीय जी विजयी हुए। सरकार ने नागरी लिपि को कचहरियों के लिए स्वीकार कर लिया। सन १९०० ई. में उर्दू के साथ देवनागरी लिपि भी कचहरियों में चलने लगी मालवीय जी की यह बड़ी भारी जीत थी।

निष्पक्ष विचारों के कारण सरकार भी मालवीय जी का बहुत आदर करती थी। सन् १९०२ में उनको युक्तप्रांत में कौंसिल का सदस्य चुन लिया गया। स्मरण रहे, उन दिनों कौंसिल के सदस्य कुल १२ होते थे और उनमें भी अधिक सदस्य अंग्रेज होते थे। सन् १९१६ में वह केन्द्रीय कौंसिल के लिए भी चुन लिए गए।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय मालवीय जी का सब से बड़ा काम माना जाता है। इसको बनाने के लिए सन् १९०४ से ही उन्होंने प्रयत्न शुरू कर दिया था। इसे चलाने के लिए बड़े धन की आवश्यकता थी। उन्होंने यह धन राजा-महाराजाओं, सेठों आदि सब से तो मांगा ही था, साधारण जनता से भी धन-संग्रह किया था। उनकी वाणी में बड़ा प्रभाव था। गांधी जी इसीलिए उनको 'भिक्षुक-प्रवर' कहा करते थे। एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने के बाद ४ फरवरी, १९१८ के दिन शुभ मुहूर्त में शास्त्र-रीति के अनुसार लार्ड हार्डिंग के हाथों से हिन्दू विश्वविद्यालय का शिलान्यास करवाया गया। यह अब बड़ी प्रसिद्ध यूनिवर्सिटी है। यहां विशुद्ध विज्ञान, इंजीनियरिंग, राजनीति, धर्म व कला आदि विषयों का विशेष प्रबन्ध है।

मालवीय जी का कांग्रेस के साथ शुरू से ही लगाव रहा है। सन् १८८६ के कोलकत्ता के अधिवेशन में उनका पहला भाषण हुआ। बाद में मद्रास, इलाहाबाद, सूरत आदि अधिवेशनों में भी इनके भाषणों का बड़ा प्रभाव पड़ा। इनके बोलने की शक्ति और योग्यता को देखकर लोग हैरान होते थे।

मालवीय जी की मधुर वाणी का सब से बड़ा गुण उनकी ईमानदारी थी। वे

सचाई के साथ जो कुछ अनुभव करते थे, वही कहते थे। वे किसी का दिल दुखाना पसन्द नहीं करते थे। उनके हृदय में सबके प्रति आदर-भाव था। इसलिए उनके भाषण प्रभाव उत्पन्न करते थे।

सन् १९०६ में मालवीय जी लाहौर में कांग्रेस के सभापति चुने गए। यहां उन्होंने लगातार तीन घण्टे मौखिक भाषण दिया। लोग मन्त्रमुग्ध बैठे रहे। कहते हैं कि उनकी वाणी में सरस्वती का वास था। सन् १९१२ में दिल्ली में अधिवेशन हुआ, तो भी इन्हें ही सभापति चुना गया।

सन् १९१६ में सरकार ने कौंसिल में 'रौलेट ऐक्ट' पेश किया। मालवीय जी ने इसका कड़ा विरोध किया इस ऐक्ट के अनुसार किसी भी व्यक्ति को संन्देह में पकड़ा जा सकता था और जेल डाला जा सकता था। इसका अभिप्राय कांग्रेस को दबाना और कुचलना था। गांधी जी ने इसके विरोध में सत्याग्रह आरम्भ किया। देश में स्थान-स्थान पर जलसे हुए और जलूस निकले। सन् १९१९ में अमृतसर में 'जलियांवाला बाग' का कुख्यात हत्याकाण्ड हुआ। मालवीय जी ने सरकार के कामों की बड़ी आलोचना की और उसकी नीति के विरोध में बहुत भाषण दिए।

सन् १९२० से १९३० तक मालवीय जी का कांग्रेस से मतभेद रहा। फिर भी भाषण कांग्रेस के हक में ही देते थे। असहयोग आन्दोलन बन्द करने के बाद गांधी जी को सरकार ने कैद कर लिया था। यद्यपि मालवीय जी का उनसे मतभेद था तो भी उनके बाद सारे देश में घूम कर कांग्रेस का प्रचार किया। सन् १९२३ में उन्होंने कौंसिल के चुनाव के समय एक नई पार्टी बना ली थी। वह कांग्रेस के प्रत्याशी (उम्मीदवार) को हरा कर कौंसिल में गए। पर वहां जाकर वह (और उनकी पार्टी) सदा कांग्रेस का साथ देते थे।

सन् १९३० में सत्याग्रह के कारण गांधी जी को सरकार ने पकड़कर जेल में डाल दिया था। लार्ड इरविन मालवीय जी के मित्र थे। उन्होंने गांधी जी को जेल से छुड़ाने के लिए लार्ड इरविन से बातचीत शुरू की। सन् १९३२ में गोलमेज कान्फ्रेंस बुलाई गई। बहुत नेताओं को लन्दन में बुलाया गया। मालवीय जी भी गए। वह कांग्रेस के प्रतिनिधि न थे। फिर भी वहां उन्होंने कांग्रेस का साथ दिया।

लन्दन से वापिस आते ही गांधी जी को पकड़ लिया गया। कांग्रेस का अधिवेशन दिल्ली में होना था। अब मालवीय जी को उस का सभापति चुना गया। वह दिल्ली को जा रहे थे। रास्ते में ही जमुना के पुल पर उनको पकड़ लिया गया। अगले वर्ष अधिवेशन कोलकत्ता में था। अब फिर मालवीय जी को सभापति बनाया गया। इस बार भी उनको रास्ते में आसनसोल के स्टेशन पर पकड़ लिया गया। इससे पहले सन् १९३१ में उनको सारी कार्यकारिणी के साथ ही पकड़ लिया गया था। इस वर्ष में तिलक-बरसी मनाते समय भी उनको पकड़ कर कैद कर दिया गया था।

सन् १९३४ में बिहार में भूकम्प आने के समय मालवीय जी बीमार थे, तो भी दुखियों की सहायता के लिए घर से निकल पड़े। उस समय भी उन्होंने उनके लिए बहुत धन इकट्ठा किया और उनमें बाँटा था। सन् १९३६ के बाद उनका स्वास्थ्य बिगड़ता चला गया।

सन् १९४६ में केन्द्र में जब कांग्रेस की सरकार बनी तो मालवीय जी ने उसे आशीर्वाद दिया था। उसके बाद १२ नवम्बर, १९४६ को मालवीय जी परलोक सिधार गए।

जब कभी और जहां कहीं देश में संकट आया, तभी वहां जा कर मालवीय जी ने देश की जनता की सेवा की। ये बड़े धार्मिक प्रकृति के थे। उन्होंने सभी कुरीतियों को सुधारना चाहा। वे नख से शिख तक स्वदेशी थे।

धारासभा में मालवीय जी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, ''मालवीय जी ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने आधुनिक भारतीय राष्ट्र की नींव रखी और उस पर एक-एक ईंट चुन कर देश की आजादी का महल बनाया। आप की मृत्यु से भारतीय राजनीति का एक युग खत्म हो गया। आपने और आप जैसे दूसरे लोगों ने उस समय काम किया था जब देश-सेवा के लिए बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। हम में से बहुत-से लोग ऐसे ही नेताओं के पथ पर चल कर आगे बढ़े हैं। मैंने अपने बचपन में मालवीय जी के चेहरे से ही भारतीय राजनीति पढ़ी थी।''

मालवीय जी ने कांग्रेस के साथ रहकर देश की तो सेवा की थी, पर उसके साथ ही धर्म और समाज का भी बड़ा उपकार किया। वह प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के पुजारी थे। वे संस्कृत के बड़े विद्वान थे और हिन्दी के भी उच्चकोटि के पत्रकार और लेखक थे। उनका अपना व्यक्तिगत जीवन सादा और स्वच्छ था। वह पूजा-पाठ नित्य-नियम के अनुसार किया करते थे। रोज़ माथे पर चन्दन का तिलक लगाते थे। प्राचीन परम्पराओं का उनको बड़ा ध्यान रहता था। कहते हैं कि गोलमेज़ कान्फ्रेंस में भाग लेने के लिए जब वह इंग्लिस्तान गए, तब वह गंगाजल का कलश और शुद्ध मिट्टी भारत से अपने साथ जहाज़ में ले गए थे। भोजन बहुत संयम से करते थे। उनकी सदा एक-सी वेष-भूषा रहती थी। सिर पर खद्दर की बिल्कुल सफेद पगड़ी होती थी। सफेद लम्बा बन्द गले का (अचकन की भांति) कोट होता था। इसके नीचे धोती या सफेद तंग पायजामा पहनते थे। गले में सफेद लम्बा दुपट्टा होता था। मुख पर सदा प्रसन्नता और दया का भाव प्रकट होता था। उनका दर्शन करते ही श्रद्धा से मस्तिष्क झुक जाता था। मालवीय जी सचमुच एक महान् ऋषि थे।

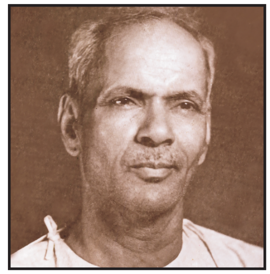

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य
कलियुगाब्द 5012–5112
जन्म शताब्दी वर्ष

मालवीय जी का निर्णय

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

स्त्रियों को वेदमन्त्रों का अधिकार है या नहीं? इस प्रश्न को लेकर काशी के पण्डितों में पर्याप्त विवाद हो चुका था। हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में कुमारी कल्याणी नामक छात्रा वेद कक्षा में प्रविष्ट होना चाहती थी, पर प्रचलित मान्यता के आधार पर विश्वविद्यालय ने उसे दाखिल करने से इन्कार कर दिया। अधिकारियों का कथन था कि शास्त्रों में स्त्रियों को वेद मन्त्रों का अधिकार नहीं दिया गया है।

इस विषय को लेकर पत्र-पत्रिकाओं में बहुत दिन विवाद चला। वेदाधिकार के समर्थन में 'सार्वदेशिक' पत्र ने कई लेख छापे और विरोध में काशी के 'सिद्धान्त' पत्र में कई लेख प्रकाशित हुए। आर्य समाज की ओर से एक डेपुटेशन हिन्दू विश्वविद्यालय के अधिकारियों से मिला। देशभर में इस प्रश्न को लेकर काफी चर्चा हुई।

अन्त में विश्वविद्यालय ने महामना मदन मोहन मालवीय जी की अध्यक्षता में इस प्रश्न पर विचार करने के लिए एक कमेटी नियुक्त की, जिसमें अनेक धार्मिक विद्वान सम्मिलित किए गए। कमेटी ने इस सम्बन्ध में शास्त्रों का गम्भीर विवेचन करके यह निष्कर्ष निकाला कि स्त्रियों को भी पुरुषों की भांति वेदाधिकार है। इस निर्णय की घोषणा २२ अगस्त, १९४६ को सनातन धर्म के प्राण समझे जाने वाले महामना मालवीय जी ने की। तदनुसार कुमारी कल्याणी देवी को हिन्दू विश्वविद्यालय की वेद शाखा में दाखिल कर लिया गया और शास्त्रीय आधार पर निर्णय किया कि विद्यालय में स्त्रियों के अध्ययन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं रहेगा। स्त्रियाँ भी पुरुषों की भांति वेद पढ़ सकेंगी।

महामना मालवीय जी तथा उनके सहयोगी अन्य विद्वानों पर कोई सनातन धर्म विरोधी होने का सन्देह नहीं कर सकता। सनातन धर्म में उनकी आस्था प्रसिद्ध है। ऐसे लोगों द्वारा इस प्रश्न को सुलझा दिए जाने पर भी जो लोग गड़े-मुर्दे उखाड़ते हैं और कहते हैं कि स्त्रियों को गायत्री मन्त्र का अधिकार नहीं है, उनकी बुद्धि के लिए क्या कहा जाए? समझ में नहीं आता।

पं. मदन मोहन मालवीय सनातन धर्म के प्राण थे। उनकी शास्त्रज्ञता, विद्वता, दूरदर्शिता एवं धार्मिक दृढ़ता असन्दिग्ध थी। ऐसे महापण्डित ने अन्य अनेक प्रामाणिक विद्वानों के परामर्श से जिसे स्वीकार किया है, उस निर्णय पर भी जो लोग संदेह करते हैं, उनकी हठधर्मी को दूर करना स्वयं ब्रह्माजी के लिए भी कठिन है।

खेद है कि ऐसे लोग समय की गति को भी नहीं देखते, हिन्दू समाज की गिरती हुई संख्या और शक्ति पर भी ध्यान नहीं देते, केवल दस-बीस कल्पित या मिलावटी श्लोकों को लेकर देश और समाज का अहित करने पर उतारू हो जाते हैं। प्राचीन काल की विदुषी स्त्रियों के नाम अभी तक संसार में प्रसिद्ध हैं, वेदों में बीसियों स्त्री-ऋषिकाओं का उल्लेख मन्त्र रचयिता के रूप में लिखा मिलता है, पर ऐसे लोग उधर दृष्टिगत न करके मध्यकाल के ऋषियों के नाम पर स्वार्थी लोगों द्वारा लिखी पुस्तकों के आधार पर समाज सुधार के पुनीत कार्य में व्यर्थ ही टांग अड़ाया करते हैं। ऐसे व्यक्तियों की उपेक्षा करके वर्तमान युग के ऋषि मालवीय जी की सम्मति का अनुसरण करना ही समाजसेवकों का कर्त्तव्य है।

निष्काम गायत्री उपासना

हमारे निज के विचार की आधारशिला गायत्री है। उसका पयपान करके हमने अपना अध्यात्म शरीर परिपुष्ट किया है। जो लाभ और जो अनुभव हमें इस उपासना के द्वारा उपलब्ध हुए हैं, उसी अनुभव से प्रेरित होकर हम अपने सभी स्वजन प्रियजनों को समय-समय पर गायत्री उपासना की प्रेरणा देते रहे हैं। जिन्होंने उस शिक्षा को अपनाकर इस मार्ग पर कदम उठाए हैं, उन्होंने भी उत्साहवर्द्धक और आशाजनक अनुभव ही प्राप्त किए हैं। लौकिक सफलताओं के लिए अत्यन्त संकट और कष्टों की निवृति के लिए जिन्होंने भी इस आवलम्बन का आश्रय लिया है, उनहें संतोषजनक प्रतिफल ही मिला है। ऐसे कोई बिरले ही होंगे, जिन्हें यह कहने का अवसर मिला है कि हमारी गायत्री उपासना व्यर्थ चली गई। जिन्होंने आत्मकल्याण के उद्देश्य में निष्काम उपासना की है, उनके संतोष का तो कहना ही क्या है? वे अपने जीवन श्रम और स्तर में कायाकल्प जैसा परिवर्तन अनुभव करते हैं।

■ *पं. श्रीराम शर्मा आचार्य*

महासुवी एवं सिरमौरी लोक गाथाओं में सृष्टि रचना विचार

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा

हिमाचल प्रदेश में महासुवी और सिरमौरी पहाड़ी भाषा की बोलियाँ हैं। १५ अप्रैल, १९४८ ई. को हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। तब शिमला की २६ छोटी-बड़ी रियासतों को मिलाकर महासू जिला बना था। इसी प्रकार २३ मार्च, १९४८ को सिरमौर रियासत के राजा ने अपनी रियासत के भारत संघ में विलय पर हस्ताक्षर किए थे और इसी आधार पर हिमाचल प्रदेश का सिरमौर जिला अस्तित्व में आया। महासू जिले का नामकरण प्रसिद्ध देवता महासू के नाम पर हुआ था। आदिकाल से ही यहां के लोग महासुवी कहलाते थे। इसी प्रकार सिरमौर के भौगोलिक स्वरूप के कारण इस क्षेत्र के लोग सिरमौरी नाम से जाने-जाते थे। इन दोनों क्षेत्रों के लोगों की उपभाषाएँ महासुवी और सिरमौरी रूढ़ हुई। यद्यपि इन दोनों क्षेत्रों में धारठी, गिरिपारी, बिशौई, शिमला-सिराजी, बराड़ी, शौराचली, किरनी, धरोची आदि छोटी-छोटी बोलियां भी बोली जाती हैं परन्तु इन दोनों क्षेत्रों के भौगोलिक स्वरूप में ये छोटे-छोटे भाषा-भाषी क्षेत्र भी महासुवी और सिरमौरी के अन्तर्गत ही समाहित हो जाते हैं।

महासुवी और सिरमौरी उपभाषाओं अथवा बोलियों में आदि काल से साहित्य की विभिन्न विधाओं के अनुसार कई प्रकार का लोक साहित्य रचा गया। शोध से इस बात की पुष्टि होती है कि इस लोकसाहित्य का आधार वैदिक सभ्यता, संस्कृति, ऋषि व्यवस्थाएं, देवपरम्पराएँ भी रही है। वस्तुतः ब्रह्माण्ड के रहस्यों और उसके स्वरूप के अनुरूप ऋषियों ने सभ्यता का आधारभूत ढांचा निर्मित किया। समाज का तानाबाना ऋषियों की तप:पूत चिन्तनधारा और ब्रह्माण्ड के वैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुरूप बनता गया। भारत का ग्रामीण परिवेश आज भी इस चिन्तनधारा के सूत्रों में बंधा है। महासुवी और सिरमौरी उपभाषाभाषी क्षेत्रों का समाज, उसकी सभ्यता और संस्कृति के तथ्य इस आशय की पुष्टि करते हैं। यहां के लोकसाहित्य में उपर्युक्त इन सभी पक्षों के दर्शन किसी न किसी रूप में निश्चय ही उपलब्ध होते हैं। लोकसाहित्य में लोकगीतों, लोकगाथाओं तथा लोकनाट्यों आदि का विशेष महत्त्व है। यहां महासुवी और सिरमौरी लोकगाथाओं में सृष्टि रचना के तथ्य प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

सृष्टि सम्बन्धी लोकगाथों को यहां के देवपुजारियों, लोककवियों, गाथाकारों, चारणों तथा भाट समुदाय के गायकों ने श्रौत परम्परा से सीखा और जीवित रखा है। देव पूजा पद्धतियों, यज्ञों, वर्षप्रतिपदा की नवसंवत्सर परम्पराओं और देवोत्सवों की विशेष आयोजनों पर सृष्टि सम्बन्धी गाथाओं को गाने की परम्परा आज भी इन क्षेत्रों में जीवित

है। इनमें कुछ गाथाएँ तो सीधे-सीधे सृष्टि के रहस्यों की बातें कहती हैं परन्तु कुछ गाथाएँ यज्ञों से सम्बन्धित भी हैं परन्तु इनमें भी सृष्टि के महत्त्वपूर्ण पक्ष उपलब्ध होते हैं। महासुवी और सिरमौरी बोलियों में सृष्टि सम्बन्धी जो गाथाएँ उपलब्ध होती हैं उनमें जरमाअल़, लिम्बर, सृष्टि का जुगणाअ, पाणी रा चूलू, बल़राज, धनकारी पाठ आदि प्रसिद्ध हैं। इन गाथाओं के मूलपाठ बहुत लम्बे हैं परन्तु यहां इनके सृष्टि सम्बन्धी पक्षों का ही वर्णन किया जा रहा है :—

सृष्टि की उत्पत्ति के सन्दर्भ में आदि काल से दश विज्ञान की विचारधाराएँ अस्तित्व में आई। वेद इस ओर संकेत करते हैं कि स्वर्ग में देवताओं ने इन दश विज्ञान धाराओं की खोज की थी। ऋषियों ने देवताओं की कृपा से सृष्टि सम्बन्धी इन धाराओं का साक्षात्कार कर वेदों के मन्त्रों में इन्हें निबद्ध किया। सृष्टि विज्ञान के ये दश मत—सदसद्वाद, रजोवाद, व्योमवाद, अपरवाद, आवरणवाद, शम्भोवाद, अमृत-मृत्युवाद, अहोरात्रवाद, दैववाद और संशयवाद रूप से प्रसिद्ध हैं। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में इन का उल्लेख इस प्रकार है—

नासदासीन्नो सदासीत् तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नभः किमासीद् गहनं गभीरम्।।
न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्याअह्न आसीत् प्रकेतः।
आनादीवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास।।
को श्रद्धा वेद क इह प्रवोचत् कुत अजाता कुतं इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाऽथा को वेद यत् आबभूव।।

ऋ.१०.१२९.१—६

उपर्युक्त मन्त्रों में सृष्टि के दशवाद —१. नासीदासीन्नो सदासीत् तदानीं नासीद्। २. रजो नो ३. व्योमा ४. परो यत् ५. किमावारीवः कुह कस्य ६. शर्मन्नम्भः किमासीद् गहनं गम्भीरम् ७. न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न ८. रात्र्याअह्न आसीत् प्रकेतः ९. अर्वाग् देवा अस्य विसर्जनेना १०. अथा को वेद यत आबभूव।।

ऋषियों द्वारा खोजे गए प्रश्नों के परिणाम देवसूक्त, विश्वकर्मन सूक्त, पुरुष सूक्त, हिरण्यगर्भ सूक्त, नासदीय सूक्त, वागाम्भृणी सूक्त तथा सृष्टि सूक्तों में विद्यमान मन्त्रों के रूप में समक्ष आए। इन सूक्तों के मन्त्रों में ऋषियों ने सृष्टि के रहस्यों को उद्घाटित करने का प्रयास किया। देवसूक्त विशेष रूप से अदिति और सूर्य की उत्पत्ति के विषय में बताता है। विश्व कर्मन सूक्त में विश्वकर्मन को ही सृष्टि का कर्ता और आकाश तथा पृथ्वी का विस्तार करने वाला कहा गया है।

पुरुष सूक्त में विश्वकर्मन के सिद्धान्तों को और भी विस्तार से व्याख्या में ढाला गया। इस सूक्त के तीन मन्त्रों में सृष्टि के मूल तत्त्व पुरुष की महिमा बताई गई है। इस सूक्त में वर्णन आया है कि सर्वप्रथम विराट उत्पन्न हुआ, विराट से जीवात्मा जन्मा। उत्पन्न होते ही उसने अपने को देव, मनुष्य, तिर्यक रूप में विराट से अलग कर दिया।

तत्पश्चात् जीवों के निवास के लिए पृथ्वी बनी। पृथ्वी के बन जाने पर जीवात्मा के विभिन्न शरीर निर्मित हुए। पुरुष सूक्त के छठे मन्त्र से चौदहवें मन्त्र तक सर्वहुत पुरुष से विभिन्न तत्त्वों की सृष्टि की कामना से देवताओं ने यज्ञ किया। वसन्त उस यज्ञ का घृत था, ग्रीष्म उसका ईन्धन तथा शरद हवि था। उस प्रथम उत्पन्न पुरुष को बलि पशु के रूप में कुशाओं के आसन पर प्रतिष्ठित कर देवताओं ने उसका प्रोक्षण किया और तत्पश्चात् यज्ञ सम्पन्न हुआ। उस यज्ञ से दधि मिश्रित घृत प्राप्त हुआ। उससे आकाश में रहने वाले पक्षियों को तथा पृथ्वी पर रहने वाले पशुओं को पैदा किया गया। उसी यज्ञ से चारों वेद, पशु और मनुष्य वर्ग भी उत्पन्न हुए –

तस्माद् विराळ् अजायत विराजो अधिपुरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिम् अथोपुरः।।
यत पुरुषेण हविषां देवाः यज्ञम् अतन्वत्।
वसन्तो अस्यासीद् आज्यम् ग्रीष्म इध्मः शरद हविः।।
तं यज्ञं बहिर्षि प्रौक्षन् पुरुषं जातम् अग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।।
तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशून् तांचक्रे वायव्यान् आरण्यान् ग्राम्याश्च ये।।
तस्ताद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दासि जज्ञिरे तस्माद् यजुस् तस्माद् अजयात्।।

ऋ.१०.९०.५–९

पुरुष सूक्त के इस यज्ञ सम्बन्धी वर्णन का पहाड़ी गाथाओं के सन्दर्भ में विशेष महत्त्व है। यहां यज्ञ से ही सृष्टि की उत्पत्ति के विभिन्न पक्षों का उल्लेख आया है। श्रुत परम्परा के आधार पर विद्यमान देवता महाराज डकरेई की 'जरमाअऴ' नामक गाथा में यज्ञ से ही सृष्टि की प्रक्रिया को दर्शाया गया है। इस गाथा में महासुवी बोली का गाथाकार मन्त्रकर्ता प्रश्न करता है कि सबसे पहले क्या था? प्रत्युत्तर आता है कि सबसे पहले 'हूम' अर्थात् होम अर्थात् यज्ञ था। हूम का धूम था, धूम का धुन्धुकार था, निरीधार था, निरीधार का नरादण था इत्यादि –

"किलूर देवा ठाकरा काकर बौसअ,
तौब नै पौअलका कूण था,
पौअलका हूम था, हूम का धूम था,
धूम का धून्धूकार था,निरीधार था,
निरीधार का नरादण था,"

अर्थ – हे देवता ठाकुर! इस सृष्टि की उत्पत्ति का क्या वंश, तब सबसे पहले कौन था? सबसे पहला हूम था, हूम (यज्ञ) का धूम था, धूम का धुन्धुकार था, धुन्धुकार का निरीधार अर्थात् जल था जल से पृथ्वी बाहर आई और नारायण पैदा हुए।

इस गाथा में सृष्टि की उत्पत्ति का संकेत 'हूम' अर्थात् यज्ञ की ओर ही है। उस यज्ञ से धूम, धुन्धुकार, नरादण अर्थात् ब्रह्मा से सारी धरती बनी। गाथा में नरादण अर्थात् ब्रह्मा पैदा हुए उसी से विष्णु और विष्णु से शिव की उत्पत्ति भी कही गई है। ये तीनों देव उस हूम की सृष्टि के विशेष अंश थे। जल नारायण का प्रथम वास था, इसीलिए जल नर रूप परमात्मा से उत्पन्न हुआ। इसीलिए नार जल होता है। गाथा में जल के लिए 'निरीधार' शब्द आया है। गाथा में नारायण से ही महादेव की उत्पत्ति की बात है। वहां वर्णन आया है कि इशर महादेव फाल्गुन मास के बुद्धवार को चौथे नक्षत्र में पैदा हुए। शिवरात्रि का काल भी यही है। इस गाथा में यह वर्णन भी आया है कि आदि शक्ति ब्रह्मा पैर नीचे करते हैं तो पाताल पैदा होता है, सिर ऊपर करते है, तो आकाश पैदा होता है। बाहुओं को इधर–उधर करने से पृथ्वी का विस्तार होता है। यही नहीं मनुष्य को पैदा करने के भी इस गाथा में संकेत हैं –

"शिरमूऴअ बौरमै प्यानो,
इओ मूऴअ, बुद्धिनराणै प्यानो।
बौरमा, बिष्णु ओ माईशर दैवा,
चीन मूरतअ, एकै ई सेवा।
सेवा देवा बी एकै ई अ लोगअ।"

अर्थ – सिर और मूल ब्रह्मा ने उत्पन्न किया, छाती भी ब्रह्मा ने पैदा की। ब्रह्मा, विष्णु और महेश ये तीनो देव, तीन मूर्तियां एक ही सेवा और मूल भी एक ही।

"इओ मूलअ बौरमै प्यानो" अर्थात् छाती और मनुष्य का नीचे वाला भाग भी ब्रह्मा ने प्यानो अर्थात् पैदा किया। इस गाथा में एक–एक शब्द वेद के पुरुष सूक्त और नासदीय सूक्त के किसी न किसी पक्ष को उद्घाटित करते हुए दिखाई देता है। नासदीय सूक्त के ''को अद्धावेद क इह'' आदि मन्त्र में यह सृष्टि किस विधि से और किस उपादान से उत्पन्न हुई? यह कौन जानता है? इसे कौन बता सकता है, किसकी दृष्टि वहां तक पहुंच सकती है, क्योंकि सभी इस सृष्टि के बाद ही उत्पन्न हुए हैं, इसलिए यह सृष्टि किस प्रकार उत्पन्न हुई, यह जानने में कौन समर्थ है। जरमाअऴ गाथाकार गाथा का प्रारम्भ ही यहां से करता है – "किलूर दैवा ठाकरा, का कर बौसअ" अर्थात् यह सृष्टि कैसे पैदा हुई हे देवता! यह जानने में कौन समर्थ है तथा इस पर किसका वश है। इस वाक्य से नासदीय सूक्त के दृष्टिकोण को ही गाथाकार प्रस्तुत करता हुआ दिखाई देता है। इस प्रकार 'जरमाअऴ' भाषा में वेदों के तथ्य गाथाकार ने श्रौत परम्परा से उसी प्रकार संजो रखें हैं, जिस प्रकार वे पुरुष सूक्त और नासदीय सूक्त में विद्यमान हैं। शैली गाथाकार की अपनी है। जरमाअऴ पहाड़ी शब्द का अर्थ जरमना अर्थात् पैदा होना होता है, जो सृष्टि के सभी पक्षों का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार 'जरमाअऴ' गाथा में भी यज्ञ से विराट, विराट से जीवात्मा, जीवात्मा से अन्य जीव जन्तुओं के पैदा होने की बात कही गई है। यही नहीं ब्रह्मा द्वारा मनुष्य के

पैदा करने का वर्णन भी इस गाथा में किया गया है। पृथ्वी, आकाश तथा पाताल आदि की संरचना के भी इस गाथा में संकेत हैं। अत: ऋग्वेद के दार्शनिक सूक्तों के तथ्य इस गाथा में प्रसंगानुकूल किसी न किसी रूप में निबद्ध हैं।

दूसरी गाथा 'लिम्बर' में भी सृष्टि की उत्पत्ति सम्बन्धी कई सिद्धान्तों की ओर संकेत हैं। इस गाथा के दो भाग हैं। पहले भाग के अन्तर्गत वेदों के सृष्टि सम्बन्धी कई पक्ष हैं। लिम्बर गाथा का गायक सृष्टि के एक-एक तथ्य को उच्चारित करता है और उपस्थित दल 'लिम्बरा' जोर से कह कर उसका समर्थन करता है। लिम्बर का अर्थ बखान करना होता है। इसमें सृष्टि के आदि से शाठी—पाशी दलों के अस्तित्व तक का बखान अर्थात् इतिहास विद्यमान है। इस गाथा में भी पहले गाथाकार प्रश्न पूछता है कि पहले-पहले क्या था?उत्तर में आता है — पहले-पहले सर्वत्र जल ही जल था। उसके पश्चात् ज्योति रूप अण्ड बना, जिसमें सूर्य के समान तेज था। उस ज्योति से 'अहंकार' पैदा हुआ। उस 'अहंकार' से शक्ति पैदा हुई। उस आदि शक्ति ने तीन अण्डे बनाए। पहले अण्डे से ब्रह्मा, दूसरे अण्डे से विष्णु और तीसरे अण्डे से महादेव पैदा हुए। इस प्रकार इसमें अण्डे से सर्वप्रथम ब्रह्मा के पैदा होने की बात कही गई है। इस लिम्बर गाथा में जिस दर्शन की बात कही गई है, वह वेदों में विद्यमान हैं। ऋग्वेद में हिरण्यगर्भ का जो उद्धरण है, वह इस गाथा में 'ज्योति रूप, अहंकार और अण्ड आदि शब्दों के रूप में निबद्ध है।

ऋग्वेद के दशम मण्डल में हिरण्यगर्भ के स्वरूप और उससे ही सभी भूत तत्त्वों की उत्पत्ति की बात कही गई है। वही हिरण्यगर्भ इनका विधाता है, उसी ने पृथ्वी से गगन पर्यन्त सभी तत्वों को आधार व अस्तित्व प्रदान किया —

हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ऋ.१०.१२१.१.

गाथाकार हिरण्यगर्भ के इन तथ्यों को अपनी गाथा के भाव में इस प्रकार पिरोता है—

पौईलै—पौईलै ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
कूण थियो ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
जौऴअ—थौऴअ ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
पौईलै—उपनो ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
जोती रूपअ ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
जोतिश रूपै ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
आदंहकार ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
आदहंकारै ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
शौक्ते उपज़ाए ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
शौक्ति माइए ,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा

चाणैं आण्डै ,,,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
पौईला आण्डा ,,,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
फोड़ना लाया ,,,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
बौरमा तिंदा ,,,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा
पौईदा किया ,,,,,,,,,,,,,,,,लिम्बरा

वस्तुतः गाथाकार हिरण्यगर्भ शब्द का प्रयोग तो नहीं करता अपितु वह जल, अहंकार और अण्ड तथा ज्योतिष शब्द का प्रयोग कर हिरण्यगर्भ से सृष्टि की उत्पत्ति के महत्त्वपूर्ण तथ्यों की ओर संकेत करता है। गाथाकार हिरण्यगर्भ सूक्त के रहस्यों से परिचित हैं और उन्हीं रहस्यों को गाथा में वाणी प्रदान करते हुए दिखाई देते हैं।

'पाणी रा चूलू' गाथा में भी सृष्टि उत्पत्ति के महत्त्वपूर्ण तथ्य विद्यमान हैं। महासुवी उप भाषा की इस गाथा में समुद्र के मध्य फूल निकलने की बात कही गई है। फिर ब्रह्मा, विष्णु और महादेव के पैदा होने के तथ्य निबद्ध है। गाथाकार शक्ति को सृष्टि का मूलकारण मानता है। विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति के तथ्यों की ओर यहां संकेत विद्यमान हैं। इस गाथा में ब्रह्मा के मानस पुत्रों, आकाश के सप्त ऋषियों, वेद के सप्त ऋषियों और गोत्र के सप्त ऋषियों का भी उल्लेख है। इस गाथा में भले ही ऋषियों के नामों का उल्लेख नहीं है परन्तु गाथाकार वेदों के उन तथ्यों से परिचित लगता है जिसमें सप्त ऋषियों के विभिन्न वर्गों का उल्लेख विद्यमान है। काश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि तथा भरद्वाज वेदों के प्रवर्तक ऋषि हैं। ये ही गोत्र प्रवर्तक ऋषि भी थे। गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भरद्वाज, वसिष्ठ और कण्व प्राण ऋषि कहलाते थे। सप्तर्षि परम्परा ऐसे ऋषि कुलों की ओर संकेत करती है जिन्होंने नाभि स्वरूप प्रजापति की नित्यवाणी अथवा वाक् के दर्शन किए। वह नित्य वाक् जिसे हम ऋक्, यजुष् और साम रूप से जानते हैं। ऋक् सूर्यमण्डल है, उसकी ज्वाला साम तथा पुरुष यजुष् स्वरूप है। यही तीनों वाक् स्वयम्भू प्रजापति का निश्वास है। गाथा में ऋषियों की सृष्टि के महत्त्वपूर्ण संकेत विद्यमान हैं। इसमें सात ऋषि गोत्र के, सात ऋषि वेद के और सात ऋषि तारों के रूप में इस प्रकार गगन मण्डल में विद्यमान दर्शाए गए हैं –

केती हौंदैं रिशुडै,
केती हौंदै तारै !!
सात हौंदै रिशुडै,
सात हौंदे तारै स्वामी,
सात हौंदे रिशुडै,
सात हौंदे तारै!!
केती रिशे अ गौतरै,
केती अ बेदै स्वामी,
केती रिशे अ गौतरै,

केती अ बेदै स्वामी!!
सात रिशे अ गौतरै,
सात रिशे अ बेदै स्वामी,
सात रिशे अ गौतरै,
सात रिशे अ बेदै!!

अर्थ – हे स्वामी! कितने ऋषि हैं और कितने तारे? सात ही ऋषि हैं और सात ही तारे हैं। कितने ऋषि गोत्री हैं और कितने वेदों के निर्माता? सात ऋषि वंशों को उत्पन्न करने वाले गोत्री ऋषि हैं और सात ऋषि वेदों के निर्माता हैं।

गाथा में ऋषियों की सृष्टि के उपरान्त जोगियों, सिद्धों, गुरु और गुरु के नौ लाख चेलों का निरूपण सृष्टि के विकास को द्योतित करता है। फिर चेलों के कार्य भी गाथा में दर्शाए गए हैं। अन्त में गाथाकार चेलों से दुनियां को बसाने का आह्वान करता है जो सृष्टि की विभिन्न स्थापनाओं के तथ्य समेटे हुए हैं। ऋषियों के अपने-अपने परिवार, वंश और गोत्र थे। उन्हीं ऋषि कुलों की सन्तान ही भारतीय समाज है। गाथाओं के उपर्युक्त तथ्य पाश्चात्य जगत् के 'मिथक' शब्द की उद्भावनाओं के निराकरण के लिए भी सशक्त प्रमाण हैं।

महासुवी और सिरमौरी लोक वाणी में शक्ति को भी सृष्टि का कारण माना गया है। 'सृष्टि रा जुगणाअ' नामक गाथा का पूर्ण भाग शक्ति द्वारा सृष्टि रचाए जाने के संकेत करता है। जुगणाअ का शाब्दिक अर्थ है जोगिनी अर्थात् दुर्गा के मन्त्र। अत: उत्पत्ति का जुगणाव का अर्थ हुआ सृष्टि उत्पत्ति के देवी मन्त्र। शक्ति का सिद्धान्त शैव तत्वों से निश्चय ही प्रभावित है। शक्ति अन्तर्मुख होने पर शिव और शिव ही बहिर्मुख होने पर शक्ति है। शक्ति का शिव में प्रवेश होने पर दोनों तत्वों के सम्मिलन से नाद (स्त्रीतत्व) का उदय होता है। आलोक और स्फूर्ति के रूप में विद्यमान शिव शक्ति में प्रवेश करके बिन्दु का रूप धारण करते हैं। जब बिन्दु और नाद तत्व मिलते हैं, तब 'मिश्रबिन्दु' का अविर्भाव होता है जो काम की संज्ञा से जाना जा सकता है। उसी से सृष्टि का उद्भव होता है। ऋग्वेद के दशम मण्डल में एक पूरा सूक्त ही शक्ति की उपासना में विरचित है। वहां उल्लेख आया है कि ऋषि अंभृण की ब्रह्मवादिनी दुहिता का नाम वाक् है। यही वाक् देवी से अभिन्न थी। उसके सन्दर्भ में एक मन्त्र में कहा गया है –

अहं रूद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विशे शरवे हन्तवा उ।
अहं जनाय समदं कृणोमि अहं द्यावापृथिवी आ विवेश।।

ऋ. १०.१२५.६

अर्थात् मैं ही ब्रह्म के द्वेषियों को मारने के लिए रूद्र का धनुष चढ़ाती हूँ। मैं ही सेनाओं को मैदान में ला खड़ी करती हूँ। मैं ही आकाश और पृथ्वी पर सर्वत्र व्याप्त हूँ। तान्त्रिक ऋग्वेद के इसी सूक्त को देवी सूक्त भी कहते हैं। उत्पति के जुगणाअ गाथा के

भाव का यदि गहराई से विश्लेषण किया जाए तो सारे भाव इस सूक्त से प्रभावित दिखाई देते हैं। प्रारम्भ में ही कहा गया है कि अपार ब्रह्म से अंहकार, उससे शक्ति, उसी शक्ति का अवतार दुर्गा, उसी दुर्गा के सत से ब्रह्मा, विष्णु और महेश की उत्पति। उसी शक्ति के बल पर ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की और विष्णु तथा शिव के पृथक्-पृथक् कार्यक्षेत्र निर्धारित किए। ये सम्पूर्ण तथ्य सृष्टि के पहलुओं को उद्घाटित करते हैं।

इसी जुगणाव में नार (जल) धरती, स्त्री, पुरूष, मेघ, पेड़, मृग और पक्षी आदि की उत्पत्ति का कारण भी शक्ति को ही माना गया है। छ: खण्ड में शिव और नौ खण्ड में दुर्गा का क्षेत्र है, ऐसा इस जुगणाव में वर्णन है। इन्द्रपुरी गई तो वह इन्द्राणी बनी, क्षत्रियों के घर में क्षत्रियाणी और ब्रह्मा के घर में गई तो सरस्वती के रूप में वेदों को रचने वाली बनी। गाथा के ये पक्ष निश्चय ही विचारणीय है —

अपारब्रहम आदहंकार
आदहंकारै शौक्ते उपाए,
तिनिके औतारै देवी दुर्गामाई,
शक्तिए माऐ सौत मौत ध्याए,
ब्रह्मा, विष्णु, अंकार उपाए,
ब्रहमा, विष्णु, शंकर नाम तींयें
उपाया सव जिमी औसमान
थापण ही थापी तोदी रौचना रौंची
तींएं उपाए मृगो ही पौंछी
तींएं किया बड़ी बुध बिहार,
तींएं उपया सृष्टि संईसार,
तींएं उपाईया पुरिखों ही नार,
स्त्री, धौरती, मौरदो, मेघ
पाणी, जल की काया,
पउणों बोले वाणी,
उपना जो बौरमा लेखा नाहि अन्त,
रिजकअ देणे बिष्णु जीवा जन्त

अर्थ — अपार ब्रह्म है, आदि अहंकार है, आदि अहंकार ने शक्ति उत्पन्न की, उस शक्ति से दुर्गा माँ पैदा हुई। शक्ति माँ ने संकल्प लिया, ब्रह्मा, विष्णु और शंकर पैदा किए। उसी शक्ति ने यह पृथ्वी और आसमान पैदा किया, सृष्टि की सम्पूर्ण रचनाएँ रची, उसी ने मृग और पंछी उत्पन्न किए और स्वयं उसमें व्याप्त हो गई। उसने ही यह सृष्टि और संसार रचाया। उसी शक्ति माँ ने पुरुष और नारी उत्पन्न किए। स्त्री, पृथ्वी, पुरुष, मेघ, पानी आदि उत्पन्न किए। ब्रह्मा को सृष्टि का रचयिता, विष्णु को पालनहार और शिव को संहारकर्ता भी शक्ति माँ ने ही बनाया।

इसके अतिरिक्त असुरों को मारने के लिए विभिन्न स्वरूपा भी शक्ति ही बनी। राम को युद्ध में जीताने का कार्य करने वाली, पाताल से राम और लक्ष्मण को लाने वाली, महाभारत के युद्ध में पाण्डवों को जिताने वाली और सहदेव के वश में रहने वाली भी यही शक्ति थी। उत्पत्ति के जुगणाअ में शक्ति का सम्पूर्ण इतिहास विद्यमान है। गाथा को पढ़ने से ऐसा लगता है कि गाथाकार को भी यही भाव अभीष्ट है। गाथा का आधा भाग तान्त्रिक स्वरूप में दुर्गा अथवा शक्ति को द्योतित करता है परन्तु इसका पूर्वी भाग सृष्टि के मूल स्वरूप के कई तथ्यों की ओर ही संकेत करता है।

इसी प्रकार के तथ्य बलराज की पहली गाथा में भी उपलब्ध होते हैं। इस गाथा का कथानक राजा बलि से सम्बन्धित है। वामनावतार में भगवान विष्णु द्वारा वामन के रूप में अवतार धारण कर बलि को पाताल लोक पहुंचाने का प्रसंग है। ठियोग और चौपाल जनपद के अन्तर्गत बलग नामक स्थान है जहां राजा बलि की पाषाण की मूर्ति और एक बड़ा यज्ञ कुण्ड है। कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी के दिन यहां एक देवोत्सव 'कादशी' का आयोजन किया जाता है। इसे देवठन (देवोत्थावनी एकादशी) भी कहा जाता है। इस उत्सव में इस गाथा को गाए जाने की प्रथा है।

बलराज की इस गाथा के कुछ तथ्य महत्त्वपूर्ण हैं। सृष्टि में नारायण का सर्वप्रथम प्रकट होना, जलरूपा पृथ्वी का वर्णन होना, नारायण के मन से मनसा का पैदा होना, मनसा को पृथ्वी की उत्पति में रक्षक रखना, ढाई दाने सरसों को छोटी सी खेती में बीजना, एक खार परिमाण की सरसों का पैदा होना। उसके पश्चात् उसकी रक्षा की चिन्ता होना, सांयकाल रुद्र का पैदा होना, रुद्र से पृथ्वी और आकाश का रक्षित होना, विष्णु का बारह वर्ष की चिरनिद्रा में समुद्र में शेषनाग की शैया पर सो जाना, देवी मनसा को सात कलश दिया जाना। नौ मास तक कलश को भण्डार में रखना। दसवें मास पहले कलश से ब्रह्मा का पैदा होना, मनसा द्वारा उससे विवाह का प्रस्ताव रखना, अस्वीकार किए जाने पर ब्रह्मा का भस्म किया जाना, दूसरे कलश का फोड़ना, विष्णु का उसमें पैदा होना, देवी द्वारा विवाह का प्रस्ताव रखना। अस्वीकार करने पर विष्णु को भस्म करना। महादेव द्वारा मनसा को अंगीकार कर के मनसा से विनती करना, ब्रह्मा और विष्णु को अमृत के छींटे से पुनर्जीवित करना, मनसा द्वारा सृष्टि प्रारम्भ करना, अट्ठारह हाथ का पहला आदमी पैदा करना, फिर सवा हाथ का मनुष्य पैदा करना, उनसे धरती न चलना, सोने, चांदी, कांसे, ताबे आदि का मनुष्य बनाना, उससे हुंकार न भरना, अंत में 'काम' का आदमी बनाना, उसी से हुंकार भरना, इसी क्रम में मनुष्यों का पैदा होना और आगे चलकर हरिश्चन्द्र जैसे राजाओं का पैदा होना आदि ये सभी तथ्य गाथा में विद्यमान हैं।

गाथा के ये तथ्य विश्लेषणीय हैं। इस क्रम में गाथाकार ने मानवोत्पत्ति के मूलभूत सिद्धान्तों और सृष्टि का प्रस्तुतिकरण किया है। पूर्व गाथाओं की तरह इस गाथा में भी हिरण्यगर्भ के सिद्धान्त की ओर संकेत है। पूर्व गाथाओं में अण्डों का वर्णन है तो यहां कलशों का। नौ मास भण्डारण में और दसवें मास कलशों को फोड़ने के अर्थ निश्चय ही

गर्भ से सृष्टि की उत्पत्ति की ओर संकेत हैं। कामदेव से ही मानवीय सृष्टि का महत्पूर्ण प्रसंग है।

नासदीय सूक्त में उल्लेख आया है कि सर्वप्रथम घनघोर अन्धकार ही सर्वत्र व्याप्त था। इस सम्पूर्ण विश्व का कारण भूत महान् जल तत्त्व से भिन्न कोई चिन्ह नहीं था। इसका अर्थ था कि यह विश्व अविभाज्य जल रूप था। उस समय उस शून्य में छुपे हुए सर्वव्यापी भावरूप ने अपनी तपस्या की। उस शक्ति से वह स्वयं पैदा हुआ और स्वयंभू कहलाया। उसमें ही मन का प्रथम विकार 'काम' पैदा हुआ। ऋषियों ने उसी निर्गुण से सगुण के बीज खोजे।

बऴराज गाथा में नासदीय सूक्त के तथ्यों को प्रतीकात्मक रूप से निबद्ध किया गया है। यहां सर्वप्रथम घोर अन्धकार का होना दर्शाया गया है। कलश हिरण्यगर्भ के प्रतीक हैं। मनसा आदि शक्ति की प्रतीक है। उस आदि शक्ति द्वारा सर्वप्रथम सोने, चाँदी के मनुष्य निर्मित करना और उनके द्वारा हुंकार न भरना। अन्त में 'काम' युक्त मनुष्य को पैदा करना और उसी से हुंकार भरना वस्तुत: स्वयंभू के मन में प्रथम विकार 'काम' की ओर संकेत है। ये तथ्य गाथा के निम्न अंश में निबद्ध हैं —

दूजे सौते लेओ माणछअ पवाने,
चाँदी सूनै रो माणछअ चाणो,
नहीं भौरौ थो हूंकार,
काँसे चाँबे रो माणछअ चाणो,
नहीं भौरौ थो हूंकार,
कामदेअ रो माणछअ चाणो,
तेनै भौरे पौइले हूंकार।
हूंकारौ रा जौमा पुतरअ,

अर्थ — दूसरे पक्ष में उस शक्ति माँ ने मनुष्य पैदा करना प्रारम्भ किया। सबसे पहले सोने चांदी का मनुष्य बनाया। वह हुंकार नहीं भरता था। कांसा और तांबे का आदमी बनाया वह भी हुंकार नहीं भरता था। फिर कामदेव का आदमी बनाया उसने हुंकार भरी। उसी से मनुष्य की सृष्टि आरम्भ हुई।

सृष्टि सम्बन्धी इन गाथाओं में दशवादों के संदर्भ गाथाकारों ने पूजासिद्धान्तों तथा यज्ञविधानों के अनुरूप किसी न किसी रूप में निरूपित किए हैं। इस प्रकार वेदों के दार्शनिक सूक्तों के सृष्टि सम्बन्धी तथ्य महासुवी और सिरमौरी लोक वाणी में ऋषियों की वैज्ञानिक चिन्तन परम्परा के अनुरूप अमर हो गए हैं। सृष्टि के सिद्धान्त न केवल सृष्टि सम्बन्धी गाथाओं में ही मिलते हैं अपितु यज्ञ सम्बन्धी गाथाओं में भी उनके दर्शन होते हैं।

ख. यज्ञ सम्बन्धी गाथा पाठ

बुशहर जनपद में चार पोथियां (पाण्डुलिपियाँ) विशेष महत्व रखती हैं। इनके पाठ विभिन्न पर्वों और उत्सवों में किए जाते हैं। ये पोथियां रावी पोथी, धनकारी पोथी,

ब्रह्मगायन पोथी और मंगलाकाली भक्ति के नाम से जानी जाती हैं। इनमें रावी पोथी भूण्डा यज्ञ में स्थापित की जाती है। धनकारी पोथी का पाठ भूण्डा यज्ञ के प्रारम्भ में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस का गायन जागरा, भड़ोजी, ब्रह्मभोज तथा राजघराने में आयोजित किए जाने वाले यज्ञ में भी किया जाता है। यज्ञ सम्बन्धी गाथाओं में धनकारी पोथी के पाठ प्रसिद्ध हैं। यहां धनकारी गाथा के पाठ उद्धृत किए जा रहे हैं।

धनकारी पोथी

धनकारी पोथी में सृष्टि की उत्पति की ओर संकेत है। वहां वर्णन आया है कि सर्वप्रथम न स्त्री थी न पुरुष, न शरीर, न रूप था न रंग, न दृष्टि थी न वाचन, न जड़ न चेतन, फूल न फल, न गोत्र न संध्या, न छः रस न पांच तत्व, न ब्रह्मा न विष्णु। इस प्रकार छत्तीस युगों में अंधकार ही अंधकार था।

उसके उपरान्त वायु, पानी, पृथ्वी, धूलिकण तथा अग्नि निरंकार के रूप में उद्भूत हुए। इस प्रकार बारह युग पैदा हुए। उपर्युक्त युगों के उपरान्त सतयुग, त्रेता युग, द्वापर और कलयुग उत्पन्न हुए। उसके उपरान्त रजोगुण सम्पन्न ब्रह्मा, सत्वगुण सम्पन्न विष्णु और तमोगुण सम्पन्न शिव पैदा हुए। यद्यपि ये तीन गुण सम्पन्न देवता थे परन्तु एक ही मूर्ति कहलाती थी। एक ही मूर्ति ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने इस पृथ्वी को धारण किया। सत्य ने इस महीतल को आवृत्त किया। ऋग्वेद पूर्व मुख में, यजुर्वेद दक्षिण दिशा में, सामवेद पश्चिम दिशा में तथा अथर्ववेद उत्तर दिशा में स्थापित हुआ। उदक के मध्य मूर्ति, मूर्ति के मध्य ओंकार और ओंकार के मध्य धव द्वितीय पैताल (पाताल) स्थापित है।

इसके उपरान्त अम्बस और पैताल सला, पैताल जिणीतल, पैताल कु तथा पैताल मैभमष आदि का वर्णन है। प्रथम पैताल ओंकार मध्य अमृतलख, नीललख, केवलख, बललख, बुद्धिलख और तेजलख स्थित हैं। पैताल आदिक मध्ये कुण्ड, कुण्ड के मध्य ओंकार, ओंकार के ऊपर दण्ड, दण्ड के ऊपर रस, रस के ऊपर कूर्म, कूर्म के ऊपर वश्रका, वश्रका के ऊपर अग्नि, अग्नि के ऊपर जल, जल के ऊपर स्थल, स्थल के ऊपर महीतल, उसके ऊपर पृथ्वीपति जो सात खण्डों और सात समुद्रों और सप्त द्वीपों में विभक्त है।

इसके उपरान्त इसमें पांच तत्वों से बनी पृथ्वी के माप और परिमाण के तथ्य लिखे गए हैं। यह पृथ्वी छपन लाख योजन मोटी, उतर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम में दो सौ लाख करोड़ योजन मोटी, सौ लाख योजन चौड़ी है। इसमें तीन भुवन, नदियां और खण्ड विद्यमान हैं। इसके ऊपर वायुमण्डल, छायामण्डल, चन्द्रमण्डल, सूर्यमण्डल, तारामण्डल, अग्निमण्डल, धूम्रमण्डल स्थित हैं। यही नहीं इस लोक में ब्रह्मपुरी, विष्णुपुरी, इन्द्रपुरी, रुद्रपुरी, सिद्धिपुरी और शिवपुरी स्थित हैं। शिवपुरी के ऊपर अतिपुरी परब्रह्म परमेश्वर की पिण्डी विद्यमान है।

पोथी में उसके उपरान्त चार वेद, चौदह शास्त्र, नौ व्याकरण, संध्या तर्पण, सूर्यमन्त्र, छः कर्म, सात बार, सताईस नक्षत्र, अट्ठाईस योग, बारह राशियां, पन्द्रह

तिथियां, चौदह मन्त्र, चौदह अवतार, ऋषि, दानव संहार, और भगवान विष्णु के चरित्र की ओर संकेत है। अन्त में परशुराम की जय की जाती है। जब गायन शैली में धनकारी पोथी का पाठ सम्पन्न होता है, तब सभी देवताओं की पालकियां रास मण्डल की ओर दौड़ती हैं। यह गाथा पाण्डुलिपि के रूप में तो बहुत बाद में अस्तित्व में आई। पहले पूर्वज श्रौत परम्परा में इस पोथी के मन्त्रों का उच्चारण करते थे। धनकारी पोथी में विद्यमान तथ्यों पर शोध अपेक्षित है। यद्यपि धनकारी पाठ में सृष्टि सम्बन्धी प्रसंग भी विद्यमान हैं, परन्तु यहां इस पाठ को इसलिए दिया गया है क्योंकि इसका गायन यज्ञ के अवसर पर विशेष विधि से होता है। इस पोथी का मूलपाठ इस प्रकार है —

अथ धनकारी प्रारम्भ

(मूल पाठ)

बोली : महासुवी लयबद्ध

ऊँ स्वस्ती नम: मनोपियान नहिं स्त्रिय पुरुषां नो पी बिन्दु न काया न रूप श्वेत रक्ता हरपीतनीलय, नास्ति वरूणो चतुर्थ न दृष्टि नैव सत्यं न ही वचनं न काया न वक्ता न जिह्वा ईत्येते न ते स्त्रया: न पुरुषा परम ब्रह्मा: नमस्तुते न मूला नास्ति संख्या नहि फला कुसभयो नास्ति दानम् नादित्या न शुन्य न सो कुल्य इत्येते नव स्त्रया: पुरुषा परम ब्रह्मानमस्तुते तव सम नास्ति का नहि शुभम् न गोत्रा न सन्ध्या नास्ति षट् रस भजश्य नो पि दत्वा न शुन्ये नेनतत्वाइत्येते नैव स्त्री पुरुष: परम ब्रह्म नमस्तुते ऊँ आदौ ब्रह्मा न विष्णु।

अथ छत्तीस युगा अन्धकार प्रवर्तते

एतार्थ युगा।।१।। हेतार्जयुगा।।२।। भोतार्ज युगा।।३।। तरज युगा।।४।। तदंदयुगा।।५।। घमण्डयुगा।।६।। विवने युगा।।७।। अव्यक्ति युगा।।८।। अविगत युगा।।९।। अविक्षत युगा।।१०।। अभ्यक्ति युगा।।११।। महिन्द युगा।।१२।। मनि अचल युगा।।१३।। वसूतर युगा।।१४।। धरणीधार युगा।।१५।। भरणी भार युगा।।१६।। सभेचर युगा।।१७।। मसहरण युगा।।१८।। मसचरण युगा।।१९।। ब्रह्महस्त युगा।।२०।। बृघहस्त युगा।।२१।। चक्रहस्त युगा।।२२।। अनहस्त युगा।।२३।। कलहस्त युगा।।२४।। अबोधयुगा।।२५।। निर्बोधयुगा।।२६।। हेति युगा।।२७।। भेति युगा।।२८।। इति छतीस युग नमस्कारे प्रवर्तन्ते

कथमुत्पन्यते वायो कथं उत्पन्यते तोयो कथं उत्पन्यते महीं श्रन्य उत्पन्यते वायु वायो उत्पन्यते रबु रबु उत्पन्यते तोयो तोया उतपन्यते मही, मही श्रनि श्रीनिमीते प्रवर्तते धुलिकार अथ वायु अग्नि निरूकारे प्रवर्ते नम:

द्वादश युगा प्रवर्तते

गज युगा।।१।। ग्रेज युगा।।२।। नंद युगा।।३।। महानिंद युगा।।४।। अबरड युगा।।५।। प्रश्रवर्ड युगा।।६।। अयोर युगा।।७।। नीर्वोशयुगा।।८।। अकरयुगा।।९।। मकर युगा।।१०।। सकरयुगा।।११।। प्रकर युगा।।१२।। इति द्वादशयुगा प्रवर्तते निरूकारे

अथ चतुरयुगा प्रवर्तते

कृत।।१।। त्रेता।।२।। द्वापर।।३।। कलि।।४।। अनन्त शब्दस्य ते शब्दा: तस्य शब्दस्य मेधुनि अन्तर्गते ज्योति ज्योति अन्तर्गतो मन:, तत् न लिलयोज तित्स विष्णु परम पद रज रूप भवे ब्रह्मा तत् रूप भवे हरि सत्वरूप भवे रुद्रा त्रयोदेवा त्रयोगुणा एक मूर्ति त्रयोदेवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर वक्र चतुर कृत्य वेदा मन्त्रा धरिते महितले सत्य पूर्व धरीते महितले सत्य पूर्व धरीते, ऋग्वेद पूर्व मुखे, यजुर्वेद दक्षिण मुखे, सामवेद पश्चिम मुखे, अथर्ववेद उत्तरा मुखे उदिका मध्ये मूर्ति, मूर्ति मध्ये ओंकार ओंकार मध्ये धवद्वितीय पैताल।

अम्बस।।३।। पैतालसला।।४।। पैताल जिणीतल।।५।। पैताल कु।।६।। पैताल मैभमश।।७।। पैताल मेवती।।८।। पैताल ओंकार।।९।। मध्ये भूतले।।१०।। पै सतसाल।।११।। पै असुनिताल।।१२।। पै रस।।१३।। पै बिन्दुतल।।१४।। पै मणीतल।।१५।। पै रसतल।।१६।। प्रथम पैताल ओंकार मध्य अमृतलख।।१७।। नील लख।।१८।। केव लख।।१९।। बल लख।।२०।। बुद्धि लख।।२१।। तेज लख।।२२।। पैताल नव काटि नाग मच्छ कच्छ कूर्म अवतार तीन सप्तमें पैताल आदिक मध्ये कुंड, कुंड मध्ये ओंकार, ओंकार ऊपर दण्ड, दण्ड ऊपर रस, रस ऊपर कूर्म, कूर्म ऊपर वश्रका, वश्रका ऊपर अग्नि, अग्नि ऊपर ध्वलहरकावहर्योजल ऊपर स्थल, स्थल ऊपर महीतल पृथ्वीपति सप्तखंड सप्त समुद्रा सप्त द्विपा: बारह बण

नव खण्ड।।१।। प्रथमे भारत खण्ड।।२।। इन्द्र खण्ड।।३।। पिंगल खण्ड।।४।। कवल खण्ड।।५।। रूद्र खण्ड।।६।। ब्रह्मा खण्ड।।७।। विश्णु खण्ड।।८।। रूद्र खंण्ड।।९।। कश्ट खण्ड।।१०।। प्रथम नीरसमुद्र।।११।। क्षीर समुद्र।।१२।। खार।।१३।। बाल कोश।।१४।। मधुकक्षा धीश।।१५।। रत्नाकरीश।।१६।। लाल समुद्र।।१७।। इति

।।१।। प्रथम जम्बु द्वीप ।।२।। जजणीद्वीप ।।३।। श्री गोमली द्वीप ।।४।। प्रकद द्वीप ।।५।। सकरी द्वीप।।६।। कोस द्वीप इति द्विपा।।

।।१।। तनरेपल ।।२।। देव ।।३।। मधु ।।४।। रिपु ।।५।। वृक्षा: ।।६।। कजली ।।७।। खंडी ।।८।। गोमली ।।९।। डुंड ।।१०।। खब ।।११।। त्रीजवन ।।१२।।इति

पंच तत्व की पाकी रोटी कितनी चौड़ी कितनी मोटी

छप्पन लाख योजना मोटी उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम द्वत अत लक्ष क्रोड़ी जोजनमोटी अत लाख जोजनविरली, दश तीन भुवन नदी खण्ड ऊपर वायुमण्डल, वायुमण्डल ऊपर छायामण्डल, छायामण्डल ऊपर सूर्यमण्डल, सूर्यमण्डल ऊपर चन्द्रमण्डल, चन्द्रमण्डल ऊपर अग्निमण्डल, अग्निमण्डल ऊपर धूम्रमण्डल, धूम्रमण्डल ऊपर ब्रह्मपुरी, ब्रह्मपुरी ऊपर विष्णुपुरी, विष्णुपुरी ऊपर इन्द्रपुरी, इन्द्रपुरी ऊपर रूद्रपुरी, रूद्रपुरी ऊपर सिद्धिपुरी, सिद्धिपुरी ऊपर शिवपुरी, शिवपुरी ऊपर अतिपुरी परम ब्रह्मपरमेश्वर ते लखघर भीतर तेलखपींडी, तेलखब्रहोड।। इति।।

चार वेद, १४ शास्त्र, ९ व्याकरण, संध्या तर्पण सूर्य मन्त्र, ६ कर्म, ७ बार, २७

नक्षत्र, २८ योग, १२ राशि, १५ तिथि, १४ मन्त्रा युग नारायण उतरेय तिथि दमीलिओ अवतार ऋषि थापे दाने संघार हरि चरित्र सुनो चित्त लाए वधे धर्म पाप क्षय जल जाए क्षत्रिमार नीस्त्र कीयो राज ब्रह्मा को दियो धर्मविस्वे ३० पाप विस्वे शून्य आदि ओंकार धन्या धनशिव महीब्रह्म विष्णु चान्या ते वेदा मोच धन्या धान धन धरणी खण्ड च पृथ्वी रात्री धन्य तु चन्द्रमा प्रतिदिन उदयो बहनि वायो च तोयो सर्व धजोपूजे विप्रपादो सो पूजे र्व देव धन कुल तनयो भार्यास्तु च धन्या धनस्य देव क्षत्रि धन धन्या पितु धर्म धन्या विप्रो षट्चार रचिते पक्षिश्नरनिमीते ब्रह्मा विष्णु च धन्या किर्ति सोधन्य देव द्विज ब्राह्मण मातु धन्य भार्याभ्रात: च धन्या धन्य पुत्रो धर्म कर्म धन्या यहि मन्दिर धन जसको धन परम राम की सदा जै।

यज्ञों में गाई जाने वाली इस गाथा में भी सृष्टि के मूल सिद्धान्त पहाड़ी बोली में निबद्ध हैं। गाथा का प्रथम अनुच्छेद 'ऊँ स्वस्ती नम: मनोपियान नहिं स्त्रिय पुरुषां नो पी बिन्दु' इत्यादि हिरण्यगर्भ से सृष्टि उत्पत्ति की ओर संकेत हैं। क्रमश: अगले अनुच्छेदों में यहां वेदों के दशवादों के तथ्य भी किसी न किसी रूप में संकेतित हैं।

इस प्रकार महासुवी और सिरमौरी उप भाषाओं की सृष्टि सम्बन्धी गाथाएँ वेदों के सूक्तों के प्रभाव को समेटे हुए हैं। ये गाथाएँ निश्चय ही सृष्टि के आदि बिन्दु से वर्तमान तक के सामाजिक विकास पथ के कई ऐतिहासिक पक्षों को उद्घाटित करती हैं। अत: इनका वर्तमान युग में विशेष महत्त्व हो जाता है।

प्राध्यापक संस्कृत
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अर्की, जिला सोलन (हि.प्र.)

प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नर:।

महाभारत, उद्योग पर्व ४३/६२

वही व्यक्ति सर्वदर्शन एवं सर्वज्ञान सम्पन्न हो सकता है जो लोक का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त करे।

✍ हिन्दी दिवस विशेष

हिन्दी क्यों नहीं बनी राष्ट्रभाषा

श्रीप्रकाश

सन् १९६५ के आसपास सम्पूर्ण दक्षिण भारत में हिन्दी का विरोध हो रहा था। तमिलनाडु में तो यह विरोध सारी सीमाएं पार कर गया था। 'डाउन-डाउन विद हिन्दी' के नारों के साथ सम्पूर्ण तमिलनाडु में हिन्दी का विरोध चरमोत्कर्ष पर था। उसी समय ***चेन्नै विश्वविद्यालय द्वारा भौतिक शास्त्र से संबंधित एक व्याख्यानमाला का आयोजन किया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चतुर्थ सरसंघचालक पूज्य रज्जू भैया, जो उस समय उत्तर प्रदेश के प्रान्त प्रचारक थे, को भी भाषण हेतु आमंत्रित किया गया था। रज्जू भैया ने अपना भाषण हिन्दी में प्रारंभ किया ही था कि सभागार में चारों ओर विरोध का स्वर गूंज उठा। अत्यन्त संयम एवं विनम्र शब्दों में रज्जू भैया ने कहा — प्रयाग विश्वविद्यालय में भौतिक शास्त्र का विभागाध्यक्ष होने के कारण मैं अंग्रेजी बोल लेता हूँ यह तो आपको जानकारी होगी ही। परन्तु पहले आप मुझे हिन्दी में बोलने दें। यदि नहीं समझ में आया तो पुन: मैं अंग्रेजी में बोलूंगा। तत्पश्चात् रज्जू भैया ने अपना पूरा भाषण हिन्दी में दिया। भाषण के बीच कोई भी चूं तक नहीं हुई। सभी मंत्रमुग्ध सुनते रहे। भाषण की समाप्ति के उपरान्त लोग रज्जू भैया को घेरकर पूछने लगे कि यह हिन्दी थी? यदि यह हिन्दी थी तो इसे समझने में कोई कठिनाई नहीं है। यह तो अत्यन्त सरल है।*** एक सज्जन पूछ बैठे — रज्जू भैया यदि यह हिन्दी है तो पंडित जवाहरलाल नेहरू किस भाषा में बोलते हैं? उनकी हिन्दी हमारी समझ में नहीं आती। रज्जू भैया ने कहा — पं. जी की भाषा के ७५-८० प्रतिशत शब्द उर्दू के होते हैं। अत: उसे सहउर्दू कह सकते हैं। इसी कारण वह सामान्यजन की समझ से परे होती है।

पूर्व राष्ट्रपति स्व. डॉ. राधाकृष्णन रूस गए थे। उस समय रूस का विभाजन नहीं हुआ था और वह सोवियत रूस के नाम से जाना जाता था। उनके कार्यक्रमों में एक कार्यक्रम वहां की संसद को भी संबोधित करना था। संसद भवन जाने के पूर्व कार्यक्रम के आयोजकों ने राधाकृष्णन जी से कहा— आप या तो अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी या हमारी राष्ट्रभाषा रूसी में ही बोलें, अंग्रेजी में नहीं। संयोग से डॉ. राधाकृष्णन जी को दोनों भाषाएं नहीं आती थीं। वे बिना भाषण दिए अपने कक्ष में ही बैठे रहे। हिन्दी न जानने के

कारण राधाकृष्णन जी को अत्यन्त ग्लानि हुई।

उपर्युक्त दोनों घटनाओं में से पहले में वक्ता द्वारा अपनी बात हिन्दी में रखने के कारण हिन्दी विरोधियों को भी हिन्दी की जानकारी हुई। वस्तुत: हिन्दी के नाम पर बोली जाने वाली उर्दू भाषा का विरोध था। दूसरी घटना में हिन्दी न जानने के कारण भारत जैसे विशाल देश के प्रकाण्ड विद्वान राष्ट्रपति को भी बिना भाषण दिए वापस होना पड़ा।

भारतीय संविधान की धारा ३४३ (१) के अनुसार—संघ की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय आयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली भाषा का रूप भारतीय भाषा का अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप होगा। (२) खण्ड (१) में ऐसी बात के होते हुए भी इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के सम्पूर्ण शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा। जिसके लिए उसका प्रयोग प्रारंभ से ठीक पहले किया जाता रहा था।

सन् १९६३ में संसद द्वारा राजभाषा अधिनियम १९६३ के विधान में संशोधन पारित कर यह व्यवस्था दी गई कि संघ शासकीय कार्य में अंग्रेजी का प्रयोग १९७१ तक करता रहेगा, जिसे बाद मे संशोधन कर अनिश्चित काल के लिए कर दिया गया। इसके साथ ही प्रथम १५ वर्ष की अवधि में हिन्दी को विकसित करने की बात कही गयी है। पर हुआ क्या? अंग्रेजी को अनिश्चित काल के लिए क्यों बनाये रखा गया है?

भारत कृषि प्रधान देश है सत्तर प्रतिशत जनसंख्या गांवों में बसती है। कुल जनसंख्या का ५० प्रतिशत से भी अधिक लोग हिन्दी समझते हैं। अंग्रेजी समझने एवं बोलने वालों की संख्या मात्र डेढ़-दो प्रतिशत ही होगी। गांधी जी भी हिन्दी के पक्षधर थे। वे कहा करते थे कि स्वतंत्र भारत की राजभाषा हिन्दी होगी। इन डेढ़ दो प्रतिशत अंग्रेजी भाषियों के लिए ५० प्रतिशत की उपेक्षा क्यों? अपमान क्यों? यह गांधी जी की उपेक्षा है, यह भारतीय संविधान की उपेक्षा है।

कहा जाता है कि तकनीकी शिक्षा के लिए, विज्ञान की शिक्षा के लिए गणित, नाभिकीय, परमाणु अथवा अन्यान्य विषयों की उच्च शिक्षा के लिए अंग्रेजी आवश्यक है। यह सर्वथा असत्य एवं मिथ्या है। यह दुष्प्रचार है। इसके पीछे कुछ लोगों द्वारा अपने निहित, गर्हित स्वार्थों के लिए बहुमत के साथ किया जाने वाला षड्यंत्र है। बहुमत के साथ छल है। उनकी इच्छा उच्च प्रशासनिक पदों पर, अच्छी नौकरियों में, भारत की भोली-भाली जनता को, भारत की मेधा को आने से रोकना है। यह अंग्रेजी माध्यम से, महंगे विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त अंग्रेजियत में रंगे पले लोगों का अपना वर्चस्व बनाये रखने

का उपक्रम है। जहां तक ज्ञान-विज्ञान एवं शिक्षा की बात है, विश्व का सर्वाधिक विज्ञान, गणित, कृषि एवं अन्तरिक्ष संबंधी ज्ञान हमारे वेदों में वर्णित हैं। जिस वृहस्पति अथवा शुक्र के विषय में अमरीका, इंग्लैण्ड, रूस अथवा चीन के वैज्ञानिकों को प्रारंभिक ज्ञान तक नहीं है, उन क्षेत्रों की जानकारी, उनका विशद ज्ञान वेदों में, संस्कृत के प्राचीन ग्रंथों में वर्णित है। आज जर्मनी विश्व के विकसित राष्ट्रों में गिना जाता है। उसने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। उसने अपने विकास का आधार वेदों को बनाया।

आज रूस, चीन, जापान, जर्मनी, फ्रांस, सबकी अपनी भाषा है, अपनी संस्कृति है। इन देशों ने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। ये विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आते हैं। पर इनकी शिक्षा का आधार इनकी अपनी भाषा है। अपनी राष्ट्रभाषा के नाते हिन्दी ही चलनी चाहिए, अंग्रेजी नहीं।

आज अंग्रेजी में बात करना, अंग्रेजियत का प्रदर्शन करना, विद्वता का, प्रगतिशीलता का एवं गौरव का प्रतीक माना जाता है। भारतीयता तथा भारतीय भाषा का उपयोग पिछड़ापन एवं दकियानूसी माना जाता है। यह कैसी विडम्बना है? अपने ही घर में हिन्दी की दुर्दशा के लिए, समस्त भारतवासी दोषी हैं। हिन्दी के विकास के लिए और प्राणपण से जुटना होगा।

भूलोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहां,
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहां,
सम्पूर्ण देशों से अधिक, किस देश का उत्कर्ष है,
उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन ? भारतवर्ष है।
हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर, ये समस्यायें सभी।
है राष्ट्रभाषा भी अभी तक देश में कोई नहीं,
हम निज विचार जना सकें जिसमें परस्पर सब कहीं,
इस योग्य हिन्दी है तदापि अब तक न निज पद पा सकी,
भाषा बिना भावैकता अब तक न हम में आ सकी।
उत्साह जल से सींचकर हित का अखाड़ा गोड़ दो,
गर्दन अमित्र अध: पतन की ताल ठोक मरोड़ दो।

■ *मैथिली शरण गुप्त*

ताजा-ताजा अंग्रेजी

नरेन्द्र कोहली

रामलुभाया अपने बेटे को लेकर स्कूल पहुँचा। प्रिंसिपल ने बच्चे को देखा, दो चार वाक्यों का संवाद भी किया और फिर रामलुभाया से पूछा, ''इसे अंग्रेजी आती है?''

''नहीं! अभी तो नहीं आती। भारतीय बच्चा है न। आप चौथी तक हिन्दी पढ़ायें, फिर अंग्रेजी भी पढ़ा दीजियेगा। आदमी का बच्चा है, दो भाषाएँ तो सीख ही सकता है।''

प्रिन्सिपल ने बुरा-सा मुँह बनाया, ''तुमने शायद सुप्रीमकोर्ट का फैसला नहीं पढ़ा। उनका कहना है कि अंग्रेजी पढ़े बिना नौकरी नहीं मिलती। इसलिए बच्चों को अंग्रेजी पढ़ायी जाये।''

रामलुभाया कुछ सोचता रहा, फिर बोला, ''आप कहीं उसकी तो चर्चा नहीं कर रहे, जो अंग्रेजी के प्रचार के लिए एक निबन्ध लिखा गया था?''

''वह फैसला था।'' प्रिन्सिपल चिढ़ गये, ''तुम अनपढ़ लोग यही अन्तर तो समझते नहीं।'' ''फैसला था?'' रामलुभाया कुछ चकित होकर बोला,''तो इसका अर्थ है कि जो लोग बच्चे के पैदा होते ही उसे अंग्रेजी नहीं पढ़ायेंगे, वे जेल भेज दिये जायेंगे।''

''यह सब नहीं कहा है सुप्रीमकोर्ट ने।'' प्रिन्सिपल ने क्रोध में कहा, ''केवल यही कहा है कि नौकरी चाहिए, तो अंग्रेजी पढ़ो।'' ''मैं भी तो यही कह रहा हूँ कि चौथी के बाद अंग्रेजी पढ़ा लीजियेगा।'' रामलुभाया ने कहा, ''पर कुछ तो हिन्दी भी सिखा दीजिये। आखिर हमारे देश में कुछ काम तो हिन्दी में भी होता है। वैसे नौकरी चाहिए हो, तो हिन्दी भी तो आनी चाहिए।''

''चौथी से नहीं अभी से अंग्रेजी पढ़नी होगी।'' ''पर क्यों? चौथी से क्यों नही? अभी ताजा-ताजा अंग्रेजी पढ़ो।'' प्रिन्सिपल लगभग चीखकर बोले, ''चौथी के बाद वाली अंग्रेजी तो बासी हो जायेगी। वासी अंग्रेजी से नौकरी नहीं मिलती।''

''यह ताजा और वासी अंग्रेजी क्या होती है? रामलुभाया हैरान होकर बोला।

''मैं नहीं जानता।'' प्रिन्सिपल ने कहा, ''कुछ तो होता ही होगा, नहीं तो सुप्रीमकोर्ट यह जिद्द क्यों करता कि आप आरम्भ की चार कक्षाएँ भी हिन्दी में नहीं पढ़ सकते। वह देश का सर्वोच्च न्यायालय है। वहां पढ़े-लिखे और समझदार लोग होते हैं। वे

कानून को जानते हैं। इसमें कोई न कोई कानूनी पेंच है। तुम अपने बच्चे को अभी से अंग्रेजी पढ़ाओ, नहीं तो व्यर्थ ही कानूनी झमेले में फंस जाओगे। हो सकता है कि सुप्रीमकोर्ट की अवमानना में ही धर लिये जाओ।''

''कह तो आप ठीक ही रहे हैं, पर प्रदेश सरकार सारा काम हिन्दी में करने लगेगी, तो मेरे ताजा-ताजा अंग्रेजी पढ़े बेटे को नौकरी कहां से मिलेगी।'' रामलुभाया ने कहा।

''तब सुप्रीमकोर्ट में प्रदेश सरकार के विरुद्ध अर्जी लगा देना और प्रार्थना करना कि कोर्ट तुम्हारे बेटे को वह नौकरी दे, जो अंग्रेजी पढ़े हुए लोगों को मिलती है।'' ''आपकी बातों से मैं काफी कुछ सीख गया हूँ।'' रामलुभाया ने कहा, ''अब आपसे निवेदन है कि मेरी पत्नी को भी आप अपने स्कूल में पहली कक्षा में प्रवेश दे दें।''

''क्यों? वह पढ़ी-लिखी नहीं है?'' नहीं, वैसे तो वह दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में पी-एच.डी. है, पर उसकी स्कूल की पढ़ाई तो हिन्दी में ही हुई थी। तो वह तो बासी अंग्रेजी ही पढ़ी हुई है।''

''क्या उसके पास नौकरी नहीं है?'' ''नौकरी भी है, वह एक अंग्रेजी समाचारपत्र की सम्पादिका है, पर आजकल गर्भवती है न।'' ''तो उससे क्या हुआ?'' आप उसको ताजा-ताजा अंग्रेजी पढ़ायेंगे, तो उसके गर्भ में जो बच्चा है, वह एकदम ताजा अंग्रेजी सीख कर पैदा होगा। उसे बढ़िया नौकरी मिलेगी।''

''पर तुम्हारी पत्नी को तो अच्छी खासी अंग्रेजी आती है न, तो फिर ऐसा झंझट क्यों करते हो?'' ''वह ताजा-ताजा अंग्रेजी .. ''वह तो ठीक है।'' प्रिन्सिपल ने कहा, ''पर हम एक छात्र की फीस लेकर दो को तो नहीं पढ़ा सकते न।''

''ठीक है, मत पढ़ाइये।'' रामलुभाया उठ खड़ा हुआ, ''मैं कोर्ट में ही जाऊँगा, कि आप मेरे होनेवाले बच्चे को ताजा-ताजा अंग्रेजी पढ़ाने से इन्कार कर रहे हैं। उसे नौकरी न मिली, तो उसके लिए आप दण्ड के भागी होंगे।''

''नहीं! नहीं! ऐसा मत करना।'' प्रिन्सिपल ने कहा, ''मैं तुम्हारे बच्चे को अमेरिका में हिन्दी पढ़ाने की नौकरी दिलवा दूँगा। चीन से कुछ हिन्दी अध्यापकों की माँग आयी है। पाकिस्तान वाले भी हिन्दी पढ़ाने वालों को खोज रहे हैं, पर हम अपने स्कूल में तो पहली कक्षा से ही अंग्रेजी में ही शिक्षा देंगे। सुप्रीम कोर्ट ने कहा है।''

१७५, वैशाली, पीतमपुरा
दिल्ली ११००३४

संशोधित राष्ट्रीय क्षय रोग नियन्त्रण कार्यक्रम

जिला बिलासपुर (हि.प्र.)

आप जानते हैं कि टी.बी. का इलाज न करने पर यह जानलेवा हो सकता है। टी.बी. किसी भी उम्र, लिंग, गरीब अथवा अमीर व्यक्ति को हो सकता है। टी.बी. से भारत में एक मिनट में एक व्यक्ति की मृत्यु होती है।

लक्षण :

तीन सप्ताह या इससे अधिक दिन की खांसी, हल्का बुखार, भूख कम होना और वजन कम होना बलगम में खून आना।

जांच :

टी.बी. की जांच के लिए बलगम के तीन नमूनों की जांच माईक्रोस्कोपिक केंद्रों में मुफ्त करवाएं। बलगम की जांच सरकारी अस्पताल, बिलासपुर, ए.सी.सी. अस्पताल बरमाणा, मारकंड, घवांडल, घुमारवीं, बरठी, झंडूता, भराड़ी, शाहतलाई, पंजगाई, मलोखर, हरलोग में सुविधा उपलब्ध है।

उपचार :

टी.बी. का इलाज 6 से 8 महीने तक चलता है। टी. बी. की दवाईयां लगातार, नजदीक के सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में – रोगी की सुविधानुसार– मुफ्त खिलाई जाती हैं। अधिक जानकारी के लिए किसी भी स्वास्थ्य केंद्र या संस्था से सम्पर्क करें तथा कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए पूरा सहयोग दें।

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष
जिला बिलासपुर
(हि०प्र०)

मुख्य चिकित्सा अधिकारी
जिला बिलासपुर
(हि०प्र०)

जिला क्षयरोग अधिकारी
एवं मेम्बर सैक्रेट्री
जिला बिलासपुर
(हि०प्र०)